

[2023] 6 एस.सी.आर 359

शिवशंकर और अन्य

बनाम

एच.पी. वेदव्यास चर

(सिविल अपील सं. 10215/2011)

29 मार्च, 2023

[न्या., बी.आर. गवई और न्या., सी.टी. रविकुमार]

उपशमन: मुकदमे का उपशमन-पक्षकारों का असंयोजन-मृत प्रतिवादी के अन्य सभी कानूनी उत्तराधिकारियों की गैर-सुनवाई-का प्रभाव-आयोजित: प्रतिवादियों में से एक की मृत्यु की स्थिति में, जब संपत्ति/हित का प्रतिनिधित्व मृतक प्रतिवादी के साथ अन्य प्रतिवादियों द्वारा संयुक्त रूप से मुकदमे में किया जा रहा था और जब वे उसके कानूनी प्रतिनिधि भी हैं, तो कार्यान्वयन न होने के कारण उक्त प्रतिवादी की मृत्यु के परिणामस्वरूप अन्य सभी कानूनी उत्तराधिकारियों के मामले में मुकदमा समाप्त नहीं होगा-ऐसा मुकदमा उसके सभी कानूनी उत्तराधिकारियों/प्रतिनिधियों के पक्षकारों के असंयोजन में शामिल न होने के लिए खराब नहीं है।

संशोधन: अपीलीय चरण में अभिवचनों का संशोधन - अनुमति - आयोजित: इस तरह की प्रार्थनाओं पर विचार करते समय, निचली अदालतों को अति तकनीकी दृष्टिकोण से बचना चाहिए-इस तरह की प्रार्थना की अनुमति देने या न देने के लिए विशेष मामले में उपस्थित होने वाली परिस्थितियों को ध्यान में रखा जाना चाहिए-यह केवल दुर्लभतम परिस्थितियों में ही स्वीकार्य है-यह केवल अनुरोध पर नहीं दिया जा सकता है, विशेष मुकदमा से अपीलीय स्तर पर-तथ्यों पर, विचारण न्यायालय ने मुकदमे में संशोधन की अनुमति दी, और प्रतिवादियों को एक अतिरिक्त लिखित बयान दायर करने के लिए कई अवसर दिए गए, जिसका उन्होंने

लाभ नहीं उठाया और मुकदमा घोषित किया गया-बाद के घटनाक्रमों की परिणति विवादित फैसले में हुई, जिसमें उच्च न्यायालय ने प्रतिवादियों को लिखित बयान में संशोधन करने की अनुमति देने से इनकार कर दिया- उच्च न्यायालय ने कहा कि लिखित बयान में संशोधन का अनुदान, यदि उस स्तर पर नए सिरे से मुद्दों को तैयार करने की आवश्यकता होती है तब दिया जाएगा ।

वाद: अधिकार के लिए मुकदमा, स्वामित्व अधिकार के आधार पर- तथ्य जो संबंधित समय पर किसी भी पक्ष में किसी भी अधिकार का खुलासा नहीं करते हैं-पूर्व अधिकार-प्रासंगिकता-आयोजित: ऐसी परिस्थितियों में, जब तथ्य किसी भी पक्ष में किसी भी अधिकार का खुलासा नहीं करते हैं, प्रासंगिक समय पर, पहले केवल मालिक के एक कल्पित चरित्र ही पूरी दुनिया के विपरीत तय करता है लेकिन वास्तविक मालिक को छोड़कर ।

मुकदमा: अपीलार्थियों के विरुद्ध प्रत्यर्थी द्वारा निषेधाज्ञा और कब्जे की वसूली के लिए मुकदमा की गई-अनुरक्षनियता-अभियोजन: अपीलार्थियों के उपलब्ध अभिवचनों पर सावधानीपूर्वक विचार करने पर, उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उन्होंने अपने लिखित बयान में अपने बचाव का खुलासा नहीं किया और साथ ही यह भी तर्क नहीं दिया कि वे मुकदमे वाली संपत्ति उनके कब्जे में हैं-इस प्रकार, उच्च न्यायालय ने मुकदमा की स्थिरता के प्रश्न को सकारात्मक और प्रत्यर्थी के पक्ष में रखने में सही माना- रिकार्ड के साक्ष्य पर सावधानीपूर्वक विचार मुकदमाने के बाद विचारण न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी उस मुकदमा में अनुसूची संपत्ति का कब्जा वापस पाने का हकदार है जिससे उसे बेदखल किया गया था-निचली विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए और उच्च न्यायालय को प्रेषित किए गए अतिरिक्त साक्ष्य पर सावधानीपूर्वक विचार मुकदमाने और सभी दलीलों और पहलुओं पर विचार मुकदमाने के बाद, उच्च न्यायालय ने केवल निचली विचारण न्यायालय के फैसले और डिक्री की पुष्टि की-इस प्रकार, जब समवर्ती निष्कर्ष सामने आए

संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882: संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882: धा. 52-अचल संपत्ति का हस्तांतरण से संबंधित लंबित मुकदमा - लिस पेंडस का सिद्धांत लंबित-आयोजित: आयात की धा.52 यह है कि यदि किसी मुकदमे के लंबित रहने के दौरान अचल संपत्ति में अधिकार का कोई हस्तांतरण होता है तो ऐसा हस्तांतरण कानून की नजर में गैर-कानूनी होगा यदि यह दूसरे के हित पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा-जहां भी सं.ह. अधिनियम लागू नहीं है, उक्त प्रावधान में ऐसा सिद्धांत है न्याय, समता और अच्छे विवेक पर आधारित अधिनियम किसी समान परिस्थिति में लागू होता है, जैसे कोर्ट बिक्री आदि-तथ्यों पर, जिस मुकदमे से अपील उत्पन्न होती है वह मालिकाना हक पर आधारित था, बिक्री विलेख की वैधता की आवश्यकता नहीं है इस अपील पर विचार किया गया और उच्च न्यायालय द्वारा उचित रूप से इस पर ध्यान नहीं दिया गया-उच्च न्यायालय ने लिस पेंडस के सिद्धांत के आलोक में, इस पर कार्रवाई करने से इनकार कर दिया। गया है-उच्च न्यायालय ने उस पर कार्रवाई करने से इनकार कर दिया है, जो कि मुकदमे विचाराधीनता रहने के सिद्धांत के आलोक में है।

दलीलें: बिना अभिवचन के प्रस्तुत किया गया सबूत-तथ्यों पर, प्रतिवादियों द्वारा वाद संपत्ति पर कब्जे/स्वामित्व के दावे की प्रासंगिकता - मूल प्रत्यर्थी लिखित बयान में पर्याप्त और उचित अभिवचन उठाने में विफल रहे कि उन्हें वाद संपत्तियों पर कब्जा करने का सर्वोच्च अधिकार है-सबूत पर्याप्त नहीं थे , उचित अभिवचनों के बिना प्रस्तुत किए जाने की कोई प्रासंगिकता नहीं होगी-उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष कि उचित अभिवचनों के बिना किसी भी मात्रा में साक्ष्य का कोई लाभ नहीं होगा, सही है।

याचिका खारिज करते हुए कोर्ट ने कहा,

अभिनिर्धारित 1.1 निपटान किये गये स्थिति के संबंध में कोई संदेह नहीं हो सकता है कि जिस न्यायालय को मामला भेजा गया है, उसे रिमांड के आदेश का पालन करना होगा और रिमांड के आदेश के विपरीत कार्य

करना कानून के विपरीत है। दूसरे शब्दों में, रिमांड के आदेश का सही मायने में पालन किया जाना चाहिए। [पैरा 7] [372-एच; 373-ए]

1.2. दलीलों के संशोधन के लिए किये गये याचनाओं से निपटने में न्यायालयों को अति तकनीकी दृष्टिकोण से बचना चाहिए। लेकिन साथ ही, न्यायालय को इस स्थिति को याद दिलाते रहना चाहिए कि इसे लिखित कथन के संशोधन के लिए केवल एक आवेदन के अनुरोध पर नहीं दिया जा सकता है, विशेष रूप से अपीलीय स्तर पर जहां विचाराधीन निर्णय और डिक्री, दूसरे शब्दों में, प्रतिकूल डिक्री के बाद और बिना किसी वास्तविक कारण के विचारण न्यायालय द्वारा पारित की जाती है। विशेष मामले में उपस्थित परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए इस बात पर विचार किया जाना चाहिए कि क्या ऐसी प्रार्थना स्वीकार्य है या नहीं और इसमें कोई संदेह नहीं है कि इसकी अनुमति केवल दुर्लभतम परिस्थितियों में ही दी जा सकती है। इस मामले में, मुकदमें में संशोधन करने के अनुरोध को निचली अदालत द्वारा अनुमति दी गई थी। तदनुसार, अभियोक्ता द्वारा निर्विवाद रूप से संशोधन किया गया था।, इसके बाद, एक वर्ष या उसके आसपास की अवधि के दौरान प्रतिवादियों को अतिरिक्त लिखित बयान, यदि कोई हो, दायर करने के लिए आठ से अधिक अवसर दिए गए। निस्संदेह, रिकार्ड पर मौजूद सामग्री से पता चलेगा कि अवसरों का लाभ नहीं उठाया गया था और कोई अतिरिक्त लिखित बयान दायर नहीं किया गया था। इसके बाद दलीलों के आधार पर मुद्दे तैयार किए गए। जाहिर है, प्रतिवादियों ने उन कारणों के लिए कोई सबूत पेश नहीं किया जो उन्हें सबसे अच्छी तरह से पता था। इसके बाद मुकदमा का फैसला सुनाया गया। बाद के सभी घटनाक्रमों पर चर्चा की जाती है जो अंततः विवादित निर्णय में समाप्त हुए। स्पष्ट रूप से उच्च न्यायालय ने कहा कि यदि उस स्तर पर लिखित बयान के संशोधन की अनुमति दी जाती है, तो नए मुद्दों को तैयार करने की आवश्यकता होती है और पक्षों को अपने अधिकारों को आंदोलन करना होता है जैसे कि नए सिरे से मुकदमे में। इन परिस्थितियों में अभिलेख पर सामग्री से प्रकट किया गया और जब उच्च न्यायालय द्वारा लिखित कथन में संशोधन

करने की अनुमति को अस्वीकार करने के लिए ऐसे पहलुओं और साक्ष्य को ध्यान में रखा गया था, तो इसमें हस्तक्षेप करने का कोई कारण या औचित्य नहीं है। [पैरा 14 और 15] [377-ए-ई; 378-डी-ई; 379-बी-ई]

1.3. प्र.सा.-1 द्वारा स्वीकार किए जाने के बाद, लिखित बयान में संशोधन करके नई याचिका लाने के प्रयास को देखा जाना चाहिए कि दूसरे प्रत्यर्थी (दूसरे मृतक अपीलार्थी) ने दिनांकित 05.10.2000 को बिक्री विलेख के मुकदमा में अनुसूचीत संपत्ति खरीदी थी। चूंकि स्वीकार्य और निर्विवाद मुकदमा से जिस वाद से अपील उत्पन्न होती है, वह स्वामित्व अधिकार पर आधारित था, इसलिए इस अपील में बिक्री विलेख की वैधता पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है और उच्च न्यायालय द्वारा सही तरीके से विचार नहीं किया गया है। स्पष्ट रूप से, उच्च न्यायालय ने लिस पेंडेंस सिद्धांत के आलोक में उसी पर कार्रवाई करने से इनकार कर दिया। यहां तक कि अगर यह माना जाता है कि संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 52 के तहत प्रावधान लागू नहीं होते हैं, तो भी इस बात पर विवाद नहीं किया जा सकता है कि प्रावधान में निहित सिद्धांत मामले में लागू होता है। यह एक लगभग तय स्थिति है कि जहां भी सं.ह. अधिनियम लागू नहीं होता है, वहां उक्त प्रावधान में ऐसा सिद्धांत, जो न्यायाधीश, समानता और सद्भावना पर आधारित है, उसी तरह की परिस्थितियों में लागू होता है, जैसे कोर्ट सेल आदि इसका स्थानांतरण न्यायालय में मामले के लंबित रहने पर भी धारा 52 के अर्थ के भीतर संपत्ति का हस्तांतरण होगा और इसलिए, धारा 52 का अर्थ यह है कि यदि अचल संपत्ति में अधिकार का कोई हस्तांतरण है किसी मुकदमे के लंबित रहने के दौरान ऐसा स्थानांतरण कानून की नजर में अनुचित होगा यदि यह संबंधित संपत्ति में मुकदमे के दूसरे पक्ष के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा। धारा 52 का प्रभाव यह है कि संपत्ति के संबंध में मुकदमे में सफल पक्ष का अधिकार हस्तांतरण से प्रभावित नहीं होगा, लेकिन यह प्रभावित होता है

इसका मतलब यह नहीं है कि हस्तांतरणकर्ता के विरुद्ध लेनदेन अमान्य है"। [पैरा 16] [379-डी-एच; 380-ए]

1.4. डाक्टरीन ऑफ लिस पेंडेंस का सिद्धांत का निषेध मुकदमें पर संस्थागत प्रभाव डालेगा। यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि अपीलीय चरण में दायर लिखित बयान में संशोधन के लिए आवेदन पर विचार करते समय, उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए परिस्थितियों में पूरी तरह से उचित था, कि उसे मंजूरी देने से, वास्तव में, फ्रेमिंग की आवश्यकता होगी नए मुद्दों और ने पार्टियों को अपने अधिकारों के लिए आंदोलन करने के लिए मजबूर कर दिया जैसे कि कोई नौसिखिया हो। पहलुओं को पूरी तरह से इस बात को स्पष्ट करने के लिए संदर्भित किया गया है कि चूंकि विषय मुकदमा केवल मालिकाना हक पर आधारित है, अर्थात्, पूर्व कब्जे के आधार पर, लंबित संपत्ति की खरीद की दलील लाने के लिए लिखित बयान में संशोधन के लिए प्रार्थना की खोज और परिणामी अस्वीकृति। मृत दूसरे अपीलकर्ता के मुकदमे को यह नहीं कहा जा सकता कि यह गंभीर अन्याय का परिणाम है। [पैरा 16][380-बी-डी]

1.5. लिखित बयान में संशोधन की मांग करने या अतिरिक्त लिखित कथन दाखिल करने में काफी देरी हुई और इस बात का कोई स्थायी कारण नहीं बताया गया कि निचली विचारण न्यायालय में ऐसी प्रार्थनाएँ क्यों नहीं मांगी गईं, जबकि मूल कार्यवाही उसके समक्ष लंबित थी। यह भी ध्यान दें योग्य है कि इस तरह की प्रार्थनाएं उच्च न्यायालय के समक्ष भी नहीं की गई थीं जब उच्च न्यायालय ने शुरू में नि.प्र.अ. का निपटारा किया था और इस न्यायालय के समक्ष भी उक्त फैसले के खिलाफ सिविल अपील में की गई थीं। इस न्यायालय द्वारा पारित रिमांड के आदेश का प्रभाव और प्रभाव बहुत प्रासंगिक है। यदि इस न्यायालय द्वारा सिविल अपील के निर्णय के मुकदमा उच्च न्यायालय के निर्णय को संशोधित नहीं किया गया था, तो इसका प्रभाव मुकदमे को पूरी तरह से पुनर्जीवित करने का होता और ऐसी स्थिति में, मुकदमे को लंबित माना जाना चाहिए था। [पैरा 20,21] [382-ए-डी]

1.6. नि.प्र.अ. में रिमांड के आदेश के खिलाफ निर्देशित उक्त सिविल अपील में इस न्यायालय के बाद के फैसले को देखते हुए, उच्च न्यायालय के फैसले को इसमें मिला दिया गया। उसी के अनुसार, निचली विचारण न्यायालय के समक्ष कार्यवाही का दायरा केवल प्रतिवादियों के अतिरिक्त साक्ष्य को दर्ज करने और उसे उच्च न्यायालय को प्रेषित करने तक सीमित था ताकि उच्च न्यायालय आरएफए का नए सिरे से निपटारा कर सके। निचली विचारण न्यायालय रिमांड के आदेश के विपरीत अपने समक्ष कार्यवाही का दायरा नहीं बढ़ा सकती थी और इसलिए, निचली विचारण न्यायालय लिखित बयान [पैरा 22] [383-ए-सी] में संशोधन के लिए आवेदन को खारिज करने में पूरी तरह से सही थी।

1.7. परिस्थितियों को पूर्णता में, लिखित कथन के संशोधन के लिए अनुरोध को अस्वीकार करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा सौंपे गए प्रासंगिक कारणों को ध्यान में रखते हुए और उसके लिए कोई कारण प्रस्तुत करने में विफलता पर ध्यान देते हुए और उल्लेखित उन कारणों में लिखित कथन के संशोधन के लिए प्रार्थना की अस्वीकृति के साथ कोई विकृति या अवैधता नहीं है। मुकदमे की स्थिरता के बारे में प्रश्नों पर कि क्या वाद संयोजन पक्षों के गैर-प्रत्यर्थी के मुकदमा खराब है और यह भी कि क्या मूल तीसरे प्रत्यर्थी की मृत्यु पर सभी कानूनी उत्तराधिकारियों के प्रतिस्थापन के मुकदमा सभी प्रतिवादियों के खिलाफ वाद को समाप्त किया जाना चाहिए था, नीचे की अदालतों ने अपीलार्थियों के खिलाफ समवर्ती निष्कर्ष दिए गये । [पैरा 23,24] [383-एफ-एच; 384-ए]

1.8 यह समझ में नहीं आता कि मुकदमे की पोषणीयता संबंधी दलील विचारार्थ कैसे उत्पन्न हो जाती है । अपीलकर्ताओं का तर्क यह है कि यह विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम और सिविल अपील का निपटारा करते समय धारा 6 के तहत दायर किया गया था, इसे न्यायालय ने प्रतिवादी/वादी के खिलाफ माना कि मुकदमा विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के तहत नहीं है। । इसलिए, अपीलार्थियों के अनुसार, अभियोक्ता/प्रत्यर्थी द्वारा कब्जे के लिए की यह मुकदमा विनिर्दिष्ट

अनुतोष अधिनियम के अंतर्गत आते हैं क्योंकि वह केवल स्वामित्व अधिकार का मुकदमा करने वाला व्यक्ति था और मूल प्रत्यर्थी संख्या 2/मृतक अपीलकर्ता संख्या 2 मुकदमा अनुसूची संपत्ति का वैध मालिक था। इसलिए, अपीलकर्ताओं के अनुसार, वादी/प्रत्यर्थी द्वारा कब्जे के लिए दावा की गई राहत मनोरंजक नहीं थी क्योंकि वह केवल मालिकाना हक का दावा करने वाला व्यक्ति था और मूल प्रत्यर्थी नंबर 2/मृत अपीलकर्ता नंबर 2 उसका वैध मालिक था। यह सच है कि प्रत्यर्थी/अभियोक्ता के पास एक मामला था कि 1993 की मु.वा. संख्या 6456 ने विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के तहत दायर किया था और सिविल अपील में निर्णय के बाद भी उसने उक्त प्रश्न को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया था। लेकिन यह न्यायालय पूरी तरह से उच्च न्यायालय से सहमत है कि क्या मुकदमा विशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 6 के तहत यह एक प्रश्न है, अब विचार के मुकदमा उपलब्ध नहीं है क्योंकि यह इस न्यायालय द्वारा सिविल अपील में निर्णय में अन्यथा अभिनिर्धारित किया गया था और इस तरह यह अवन्तिम की प्राप्ति हो चुकी थी। सिविल अपील में निर्णय के सामने यह निष्कर्ष कि 1993 का मु.वा.सं. संख्या 6456 विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के तहत एक नहीं है, पुनर्विचार योग्य नहीं है। जाहिर है, इस प्रकार ठहराने के बाद भी और उच्च न्यायालय के फैसले को संशोधित करने पर, इस न्यायालय ने केवल नि.प्र.अ. के नए सिरे से निपटारे का निर्देश दिया और उस संबंध में निचली विचारण न्यायालय को प्रतिवादियों के अतिरिक्त साक्ष्य को दर्ज करने और उसे एक रिपोर्ट के साथ उच्च न्यायालय को प्रेषित करने का निर्देश दिया गया। [पैरा 25,26] [384-बी-जी]

1.9 यह स्पष्ट है कि प्रतिवादियों के उपलब्ध अभिवचनों पर सावधानीपूर्वक विचार करने पर, उच्च न्यायालय ने कहा कि उन्होंने अपने लिखित बयान में अपने बचाव का खुलासा नहीं किया और साथ ही इसमें यह भी तर्क नहीं दिया कि मुकदमे की संपत्ति उनके कब्जे में हैं। ऐसी परिस्थितियों में, जब तथ्य किसी भी पक्ष में किसी भी अधिकार का खुलासा नहीं करते हैं, तो प्रासंगिक समय पर, केवल पूर्व कब्जा ही मालिक

के कल्पित चरित्र में भूमि के कब्जे के अधिकार को वास्तविक मालिक के विरुद्ध न होकर पूरी दुनिया के विरुद्ध तय करता है। उस संदर्भ में, इस उक्ति का उल्लेख करना युक्तिसंगत है "पोसेसिओ कन्ट्रा ओमनेस वलेत्परेटर इयुर सिउई इयुस सित पोसेसिओनियस " (जिसके पास अधिकार है, उसके पास अधिकार रखने वाले को छोड़कर सभी के विरुद्ध अधिकार है)। उच्च न्यायालय का मुकदमे की पोषणीयता के प्रश्न को सकारात्मक और प्रत्यर्थी के पक्ष में मानना सही है। [पैरा 30 और 31][386-सी-ई, एफ]

1.10 जाहिर है, निचली अदालतों ने प्रतिवादियों की उक्त दलीलों को बरकरार रखने से इनकार कर दिया। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि अपीलकर्ताओं ने यह भी तर्क दिया है कि एस एम एस जो एक संगठन है और एस वी आर को मुकदमे में पक्षकारों का मुकदमा भी शामिल किया जाना चाहिए था और उनके असंयोजन पक्ष को देखते हुए, मुकदमा असंयोजन पक्षकारों के लिए बुरा है। जब वह स्थिति होती है और जब विषय मुकदमा से पहले कब्जे पर आधारित होता है तो अपीलकर्ताओं का यह तर्क देना उचित नहीं होता है कि मुकदमा एसएम संघ और एसवीआर के गैर-याचिकाकर्ता के मुकदमा खराब है। [पैरा 32] [386-एफ-एच; 387-ए, डी]

1.11 अपीलकर्ताओं ने यह भी तर्क दिया है कि मृतक प्रत्यर्थी संख्या 3 की मृत्यु के बाद उसके सभी कानूनी प्रतिनिधियों को प्रतिस्थापित नहीं करने के कारण सभी प्रतिवादियों के खिलाफ मुकदमा समाप्त कर दिया जाना चाहिए था। यह तर्क किसी भी आधार और गुणों से रहित है और नीचे की अदालतों द्वारा सही ढंग से खारिज कर दिया गया था। इस संबंध में यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि प्रथम अपीलकर्ता और मृतक दूसरे अपीलकर्ता और उनके पिता सभी को प्रत्यर्थी के मुकदमा में मुकदमे में रखा गया था और वे संयुक्त मुकदमा से मुकदमे का बचाव कर रहे थे। मूल तीसरे प्रत्यर्थी की मृत्यु पर, मूल प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2, जो मूल प्रत्यर्थी संख्या 3 के बेटे हैं, उन्होंने संयुक्त हित का पूरी तरह से और पर्याप्त मुकदमा से प्रतिनिधित्व करते हुए मुकदमे का विरोध किया और

उसके बाद, मुकदमे में प्रतिकूल निर्णय और डिक्री का सामना करने के बाद, उच्च न्यायालय के समक्ष अपील को लगन से प्राथमिकता दी, जो अंततः विवादित निर्णय और डिक्री में समाप्त हुई। इसके बाद भी, जाहिर है कि वे संयुक्त हित पर शीर्षक वाली अपील दायर करके लगन से मुकदमा चला रहे हैं, भले ही संयुक्त हित के विवाद को सही माना जाए, । [पैरा 33] [387-ई-एच]

1.12 यही सादृश्य ऐसे मामले में भी लागू होता है जहां प्रतिवादियों में से एक की मृत्यु की स्थिति में भी, जब संपत्ति/हित का अन्य प्रतिवादियों द्वारा मृत प्रत्यर्थी के साथ संयुक्त मुकदमा से मुकदमे में पूरी तरह से और पर्याप्त मुकदमा से प्रतिनिधित्व किया जा रहा था और जब वे उसके कानूनी प्रतिनिधि भी हों। ऐसे मामलों में, उक्त प्रत्यर्थी की मृत्यु के परिणामस्वरूप मुकदमा अन्य सभी कानूनी उत्तराधिकारियों को लागू न करने के कारण, प्रतिवादियों को यह तर्क देते हुए नहीं सुना जा सका कि मृतक प्रत्यर्थी के अन्य सभी कानूनी प्रतिनिधियों के प्रतिस्थापन न करने के कारण मुकदमा समाप्त हो जाना चाहिए। इस मामले में, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि मृतक तीसरे प्रत्यर्थी के साथ मूल प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2 संयुक्त रूप से अपने संयुक्त हित का बचाव कर रहे थे। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलार्थी/मूल प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2 ने मूल प्रत्यर्थी संख्या 3 की मृत्यु के बावजूद मुकदमे का बचाव किया और पहली अपील को प्राथमिकता दी और मुकदमा चलाया। दूसरे अपीलकर्ता की मृत्यु के बाद इस कार्यवाही में पहले अपीलकर्ता द्वारा मृत दूसरे अपीलकर्ता के प्रतिस्थापित कानूनी प्रतिनिधियों के साथ संयुक्त हित को पूरी तरह से और पर्याप्त मुकदमा से आगे बढ़ाया जा रहा है, इस तर्क को अस्वीकार करने के लिए कि सभी प्रतिवादियों के खिलाफ मृत तीसरे प्रत्यर्थी के सभी कानूनी उत्तराधिकारियों के प्रतिस्थापन के कारण वाद को समाप्त किया जाना चाहिए था, नीचे की अदालतों के निष्कर्षों और निष्कर्षों से असहमत होने का कोई कारण नहीं है। इसी कारण से, यह निवेदन भी विफल हो जाता है कि मुकदमा उसके सभी कानूनी उत्तराधिकारियों/प्रतिनिधियों असंयोजक पक्षकारों के लिए मुकदमा खराब था। [पैरा 36] [389-ए-ई] ए

1.13 एक और कारण है कि इस तर्क के लिए तीसरे मृतक प्रत्यर्थी के कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड पर लाने में विफलता के कारण असफल हो जाना चाहिए संयोजन पक्ष के गैर-याचिकाकर्ता का मुकदमा खराब था। प्रदर्शनी डी-1 पर भरोसा करते हुए यह तर्क दिया जाता है कि एसएमएस और एसवीआर द्वारा संयुक्त मुकदमा से पहले अपीलकर्ता/पहले प्रत्यर्थी के पक्ष में निष्पादित वाद अनुसूचित संपत्ति की बिक्री के लिए समझौते के अनुसार इसका कब्जा पहले अपीलकर्ता को सौंप दिया गया था। उच्च न्यायालय द्वारा इसकी अस्वीकृति को बरकरार रखा जाता है। हालाँकि, उक्त तर्क से जो निकाला जा रहा है वह यह है कि उसी के आधार पर अपीलकर्ता आवश्यक पक्षों के गैर-प्रतिवाद का आधार नहीं उठा सकते हैं, क्योंकि पहले अपीलकर्ता को मुकदमे में ही एक पक्षकार के मुकदमा में प्रस्तुत किया गया था और वह वह व्यक्ति था जिसके पक्ष में उसे कथित मुकदमा से निष्पादित किया गया था। प्रदर्शनी डी-2 बिक्री विलेख के आधार पर उठाए गए विवाद को भी उच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया और इसे बरकरार रखा गया। ध्यान दें कि फिर से केवल इस स्थिति पर जोर देने के लिए लिया जाता है कि उसी पर बनाया गया मामला किसी भी तरह से आवश्यक पक्ष/पक्षों के गैर-प्रत्यर्थी के विवाद को उठाने का आधार नहीं हो सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि मृतक दूसरा अपीलकर्ता, जिसे उसके तहत विक्रेता के मुकदमा में दिखाया गया था, मुकदमे में मूल दूसरा प्रत्यर्थी था। इन कारणों से आवश्यक पक्षों के गैर-संयुक्त होने का तर्क विफल हो जाता है। [पैरा 37] [389-ई-एच; 390-ए-बी]

1.14 निम्न न्यायालयों का यह निर्णय सही है कि प्रतिवादियों के पास वाद अनुसूचित संपत्ति पर स्वामित्व का मामला नहीं था और प्रदर्शनी डी-2 के आधार पर मामले को सामने लाने की मांग पर उच्च न्यायालय द्वारा मुकदमा खारिज कर दिया गया था और इसे बरकरार रखा गया है। वे कब्जे के लिए कोई बेहतर दावा स्थापित करने में भी विफल रहे हैं। उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष कि उचित अभिवचनों के बिना किसी भी

मात्रा में साक्ष्य का कोई लाभ नहीं होगा, कानून की सही व्याख्या है।[पैरा 38] [389-बी-डी]

1.15 ऐसी स्थितियों में, यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि मूल प्रत्यर्थी लिखित बयान में आत्यन्तिक रूप में और उचित अभिवचन मुकदमा में विफल रहे कि उन्हें मुकदमे की संपत्तियों आत्यन्तिक रूप कब्जा मुकदमा का बेहतर अधिकार है। उचित दलीलों के बिना प्रस्तुत किए गए किसी भी प्रमाण की कोई प्रासंगिकता नहीं होगी। निचली अदालतों ने 'बी' अनुसूची संपत्ति से प्रतिवादियों को जबरन बेदखल करने के लिए अभि.सा.-5 के साक्ष्य पर सही ढंग से भरोसा किया है। इसे बनाए रखने के लिए कुछ भी रिकॉर्ड पर नहीं है। इस मुद्दे के संबंध में कि क्या विवादित निर्णय विकृति के साथ दिया गया है या कोई पेटेंट अवैध है जो भारतीय संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत शक्ति के आह्वान में हस्तक्षेप की गारंटी देता है। निचली अदालतों द्वारा दिए गए ठोस कारण इसका जवाब नकारात्मक हो जाता है। रिकार्ड के साक्ष्य पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंची कि प्रत्यर्थी/अभियोक्ता उस वाद अनुसूचीत संपत्ति पर कब्जा वापस पाने का हकदार है जिससे उसे बेदखल किया गया था और यहां तक कि विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज और उच्च न्यायालय को प्रेषित अतिरिक्त साक्ष्य पर विचार करने और सभी दलीलों और पहलुओं पर विचार करने के बाद उच्च न्यायालय ने केवल विचारण न्यायालय के फैसले और डिक्री की पुष्टि की। जब नीचे दिए गए न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्ष पर सही विचार और वस्तुगत मूल्यांकन का परिणाम होते हैं तो वे किसी भी हस्तक्षेप की मांग नहीं करते हैं। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि मुकदमा निर्विवाद मुकदमा से पूर्व अनुमति और अवैध बेदखल के आधार पर दायर किया गया था, विचारण न्यायालय द्वारा दी गई और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई डिक्री के लिए प्रत्यर्थी/अभियोक्ता की पात्रता पर विचारण न्यायालय के समवर्ती निष्कर्षों को स्थानांतरित करने के लिए दूसरे मृतक अपीलकर्ता के पक्ष में निष्पादित बिक्री विलेख (भले ही

मालिकों द्वारा) रखने का कोई कारण नहीं है। [पैरा 39,40,41] [390-जी; 391-ए-एफ]

थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड बनाम नानक बिल्डर्स और इन्वेस्टर्स प्राइवेट लिमिटेड (2013) 5 एससीसी 397:[2013] 2 एससीआर 74; गायत्री महिला कल्याण संघ बनाम. गौरम्मा और अन्य (2011) 2 एससीसी 330:[2011] 2 एससीआर 47; पंडित ईश्वरदास बनाम मध्य प्रदेश राज्य और अन्य (1979) 4 एससीसी 163: [1979] 2 एससीआर 424; यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया, कलकत्ता बनाम अभिजीत टी कंपनी (पी) लिमिटेड अन्य (2000) 7 एससीसी 357 : [2000] 3 पूरक. एससीआर 153; रुखमानंद बनाम दीनबंध 1971 जेएलजे एसएन 159; कृष्ण राम महाले (मृत) अन्य एलआर बनाम श्रीमती शोभा वेंकट राव (1989) 4 एससीसी 131; नायर सर्विस सोसाइटी लिमिटेड बनाम रेव. पिता के. सी. अलेक्जेंडर और अन्य। एआईआर 1968 एससी 1165 : [1968] एससीआर 163; मुस्तफा साहब बनाम सांथा पिल्लई (1900) आईएलआर 23 मैड 179; भुरेय खान बनाम यसीन खान (मृत) एलआर द्वारा और अन्य (1995) 3 पूरक. एससीसी 331; आन्ध्र प्रदेश राज्य द्वारा मुख्य सचिव और अन्य बनाम प्रताप करण और अन्य (2016) 2 एससीसी 82: [2015] 12 एससीआर 702; दुग्गी वीरा वेंकट गोपाल सत्यनारायण बनाम सकल वीरा राघवैया और अन्य (1987) 1 एससीसी 254 : [1987] 1 एससीआर 674; हसमत राय और अन्य वी.रघुनाथ प्रसाद (1981) 3 एससीसी 103 : [1981] 3 एससीआर 605; भारत संघ बनाम इब्राहिम उद्दीन और अन्य (2012) 8 एससीसी 148 : [2012] 8 एससीआर 35 - संदर्भित आर.एफ.वी. ह्यूस्टन, अपकृत्य विधि पर सैल्मंड 4 (17वां)

एडन., 1977) - संदर्भित

निर्णयजन्य विधि संदर्भ

- [2013] 2 एससीआर 74 में अनुच्छेद 16 संदर्भित है।
[2011] 2 एससीआर 47 में अनुच्छेद 18, 19 संदर्भित है।
[1979] 2 एससीआर 424 में अनुच्छेद 18 संदर्भित है।
[2000] 3 पूरक एससीआ 153 में अनुच्छेद 21 संदर्भित है।
(1989) 4 एससीसी 131 में अनुच्छेद 27 संदर्भित है।
[1968] एससीआर 163 में अनुच्छेद 27, 28 संदर्भित है।
(1900) आईएलआर 23 मैड 179 में अनुच्छेद 28 संदर्भित है।
(1995) 3 पूरक एससीसी 331 में अनुच्छेद 34 संदर्भित है।
[2015] 12 एससीआर 702 में अनुच्छेद 35 संदर्भित है।
[1987] 1 एससीआर 674 में अनुच्छेद 38 संदर्भित है।
[1981] 3 एससीआर 605 में अनुच्छेद 38 संदर्भित है।
[2012] 8 एससीआर में अनुच्छेद 38 संदर्भित है।

सिविल अपीलिय अधिकारिकता: सिविल अपीलिय सं.10215/2011

आरएफए सं.1966/2007 में बेंगलोर में स्थित कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 09.09.2010 के निर्णय और आदेश से।

अपीलार्थियों की तरफ से अधिवक्ता सुश्री. किरण सूरी, वरिष्ठ अधिवक्ता, टी.एस. शांति, नरेंद्र कुमार, संजीव कुमार ।

प्रत्यर्थी की तरफ से अधिवक्ता नरेंद्र हुड्डा, वरिष्ठ अधिवक्ता, अल्जो के. जोसेफ, शौर्य लांबा, सुश्री शेलना के., रितेश कुमार चौधरी ।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया था

न्या. सी. टी. रविकुमार

1. मु.वा.सं. में प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2, बेंगलोर के XIV वे अतिरिक्त सिविल जज, मू.मु. संख्या 6456/1993 में भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत यह अपील दायर की, जिसमें कर्नाटक के बेंगलोर में अवस्थित माननीय उच्च न्यायालय द्वारा नि.प्र.अ. सं. 1966/2007 पर दिनांक 09.09.2010 को पारित निर्णय और डिक्री पर सवाल उठाया गया। वे उक्त मुकदमे में तीसरे प्रत्यर्थी के बेटे हैं, जिनकी इसके लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई थी। उन्होंने निर्णय और डिक्री दिनांक 04.07.2007 से व्यथित और असंतुष्ट होने पर पहली अपील दायर की थी। उपरोक्त अपील के लंबित रहने के दौरान, दूसरे अपीलकर्ता की मृत्यु हो गई और परिणामस्वरूप उसके कानूनी उत्तराधिकारियों को अतिरिक्त अपीलकर्ता 2.1 से 2.4 के रूप में पक्षकार बनाया गया। फलस्वरूप, इस अपील में, इसके बाद मूल प्रथम अपीलकर्ता और मृत दूसरे अपीलकर्ता के निहित कानूनी उत्तराधिकारियों को सामूहिक रूप से 'अपीलकर्ता' के रूप में वर्णित किया गया है, जब तक कि अन्यथा विशेष रूप से उल्लेख न किया गया हो। इसमें प्रत्यर्थी उक्त मुकदमे में वादी था जो मूल रूप से इस प्रकार प्रार्थना करते हुए दायर किया गया था:

“स्थायी निषेधाज्ञा की डिक्री के मुकदमा निर्णय देना जो पहले और दूसरे प्रतिवादियों को या तो स्वयं या उनकी ओर से किसी द्वारा से वादी के अधिकार, स्वामित्व और वाद अनुसूची संपत्ति पर और उसमें ब्याज में हस्तक्षेप करने से रोकता है, जिसमें संपत्ति को दूसरों से अलग करने वाले दस्तावेज बनाना और लागत प्रदान करना शामिल है और ऐसी अन्य राहत (ओं) प्रदान करना जो न्यायाधीश और समानता के हित में परिस्थितियों के तहत उचित और उचित समझी जाती हैं।”

2. इसमें अपीलकर्ताओं ने लिखित बयान दायर किया, जिसमें तर्क दिया गया कि अन्य बातों के साथ साथ साथ-साथ, विषय मुकदमा बनाए

रखने योग्य नहीं है, कि कब्जे के लिए कोई प्रार्थना नहीं है, कि मुकदमे का सही मूल्यांकन नहीं किया गया था और मुकदमे की संपत्ति के वास्तविक मालिकों को पक्षकारों के मुकदमा में प्रस्तुत नहीं किया गया था। इसके बाद, अभियोक्ता/प्रतिअभियोक्ता ने पैराग्राफ 9(ए), अनुसूची ए, बी और 'सी' जोड़कर वाद में संशोधन किया और उनके लिए प्रार्थना भी की।, प्रार्थना 'बी'। समग्र मुकदमा से, सूट संपत्ति, जो एक घर है जिसमें सं. बी-91 को 'ए अनुसूची' के मुकदमा में वर्णित किया गया है और जिसमें से उल्लिखित सीमाओं के भीतर 35 'x 40' मापने वाले हिस्से को 'बी अनुसूची' के मुकदमा में वर्णित किया गया है। 'सी अनुसूची' परिसर का वह हिस्सा है जिस पर सं. बी-91 जैसा कि उसमें वर्णित है। सटीक होने के लिए, संशोधित शिकायत में प्रार्थनाओं को नीचे दिया गया है:-

“(क) प्रतिवादियों 1 से 3 के खिलाफ स्थायी निषेधाज्ञा का एक निर्णय और डिक्री जिसमें प्रतिवादियों को अभियोक्ता को अनुसूची परिसर का कब्जा बहाल करने और अभियोक्ता के वैध कब्जे और किसी भी तरह से अनुसूची संपत्ति के आनंद में हस्तक्षेप नहीं करने का निर्देश दिया गया है।

(ख) प्रतिवादियों के खिलाफ अनिवार्य निषेधाज्ञा के लिए एक निर्णय और डिक्री, जिसमें प्रतिवादियों को 'बी' अनुसूची संपत्ति के कब्जे को बहाल करने का निर्देश दिया गया है, जिसे संलग्न रेखाचित्र में 'एबीसीडी' के मुकदमा में चिह्नित किया गया है, और 'सीडीईएफ' भाग के लिए प्रतिवादियों के खिलाफ स्थायी निषेधाज्ञा के लिए डिक्री हो सकती है, जिसे शिकायत के लिए 'सी' अनुसूची के मुकदमा में चिह्नित किया गया है और सि.प्र.स के आदेश XVIII नियम 12 के साथ वास्तविक लाभ की जांच के लिए एक डिक्री हो सकती है, और मुकदमे की लागत के लिए एक डिक्री भी हो सकती है, जिसमें ऐसी अन्य राहत या राहत भी हो सकती है जो इस माननीय न्यायालय को मामले की परिस्थितियों में उचित लगे।:

3. जाहिर है, प्रतिवादियों ने वाद के संशोधन की अनुमति देने वाले आदेश को चुनौती नहीं दी और संशोधन के बाद अतिरिक्त लिखित बयान भी दाखिल नहीं किया।

4. विचारण न्यायालय ने दोनों पक्षों की दलीलों के आधार पर निम्नलिखित मुद्दों को तैयार किया:

- 1) आवश्यक पक्षकारों का मुकदमा क्या कुसंयोजन या असंयोजन के लिए बुरा है?
- 2) क्या वाद पत्र पर भुगतान किया गया न्यायालय शुल्क अपर्याप्त है?
- 3) क्या वादी वाद में अनुसूचित परिसर पर कब्जा पाने का हकदार है?

5. यद्यपि वादी/प्रत्यर्थी ने अपने दावों के समर्थन में मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत किए, लेकिन प्रत्यर्थी ने उसमें कोई सबूत नहीं दिया। विचारण न्यायालय ने साक्ष्य और लागू कानून के प्रावधानों पर विचार करने के बाद दिनांक 04.07.2007 के फैसले के अनुसार मुकदमे का आंशिक मुकदमा से फैसला सुनाया, जिसमें कहा गया कि अभियोक्ता/प्रतिवादी, प्रतिवादियों से मुकदमा 'बी' अनुसूची संपत्ति का कब्जा वसूल करने का हकदार है और इसके परिणामस्वमुकदमा प्रतिवादियों को उस दिन से दो महीने के भीतर अभियोक्ता (प्रतिवादी) को मुकदमा 'बी' अनुसूची संपत्ति खाली करने और देने का निर्देश दिया। इसके अलावा, यह भी आदेश दिया गया कि अभियोक्ता 'बी' अनुसूचित संपत्ति के कब्जे की वसूली का हकदार होगा। प्रतिवादियों की ओर से निर्धारित अवधि के भीतर मुकदमा 'बी' अनुसूचित संपत्ति को खाली करने और वितरित करने में प्रत्यर्थी विफलता के मामले में कानून की सम्यक प्रक्रिया द्वारा । इसके अलावा, प्रतिवादियों को अभियोक्ता द्वारा 'सी' अनुसूची संपत्ति के शांतिपूर्ण कब्जे और आनंद में हस्तक्षेप करने से स्थायी निषेधाज्ञा द्वारा रोक दिया गया था।

6. जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, प्रत्यर्थी संख्या संख्या 3 की मुकदमे विचाराधीनता रहने के दौरान मृत्यु हो गई। जीवित प्रत्यर्थी अर्थात्, मूल प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2 ने आरएफए संख्या 1966/2007 में उच्च न्यायालय के समक्ष विचारण न्यायालय द्वारा 04.07.2007 को दिए गये फैसले और डिक्री को चुनौती दी। उक्त पहली अपील में, उन्होंने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में, सि.प्र.स.) के आदेश XLI नियम 27 के तहत एक आवेदन दायर किया जिसमें अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति मांगी गई थी। वस्तुतः, उन्होंने निचली विचारण न्यायालय के समक्ष कोई सबूत पेश नहीं किया। इसमें प्रत्यर्थी (वादी) ने मूल वाद के रूप में अपील की स्थिरता पर आपत्ति जताई। मु.वा.सं.संख्या 6456/1993 विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 6 के तहत दायर किया गया था। उच्च न्यायालय ने उक्त आपत्ति को खारिज कर दिया और दिनांक 29.10.2007 के निर्णय के अनुसार अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए आवेदन की अनुमति दी और प्रतिवादियों को एक अवसर प्रदान करने के बाद मामले को नए सिरे से निपटाने के लिए विचारण न्यायालय को भेज दिया। इसमें पहला अपीलकर्ता और मृत्यु प्राप्त दूसरा अपीलकर्ता अतिरिक्त साक्ष्य का नेतृत्व करेगा। विशेष अवकाश याचिका एसएलपी (सिविल) संख्या 1279/2008 में वादी/प्रत्यर्थी द्वारा उच्च न्यायालय के दिनांकित 29.10.2007 के उक्त फैसले को अनिवार्य मुकदमा से इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी, जिसमें तर्क दिया गया था कि उक्त मुकदमा विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के तहत दायर किया गया था, उच्च न्यायालय के समक्ष दायर अपील नि.प्र.अ. सं. 1966/2007 होने के कारण सक्षम नहीं थी। इस न्यायालय और एसएलपी से उत्पन्न सिविल अपील द्वारा अनुमति दी गई थी।, 2009 की सिविल अपील का निपटारा दिनांक 03.09.2009 के फैसले के अनुसार किया गया था, जिसमें कहा गया था कि 1993 का ओ. एस. विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के तहत नहीं था, क्योंकि मांगी गई राहत इसके दायरे में नहीं आती थी। जबकि, वस्तुतः, अपील के नए सिरे से निपटारे के लिए मामले को उच्च न्यायालय को भेजने के लिए

विचारण न्यायालय को उच्च न्यायालय के निर्देश के अनुसार साक्ष्य दर्ज करने और उच्च न्यायालय को उस पर एक रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया था ताकि वह निर्धारित समय के भीतर अपील का निपटारा कर सके।

7. मामले को आगे बढ़ाने से पहले, हम सोचते हैं कि रिमांड के इस तरह के आदेश के प्रभाव पर विचार करना उचित है क्योंकि यह निश्चित रूप से इस अपील पर विचार को अस्वीकार कर देगा। स्थापित स्थिति के संबंध में इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि जिस न्यायालय को मामला भेजा गया है उसे रिमांड और कार्रवाई के आदेश का पालन करना होगा रिमांड के आदेश का उल्लंघन करना कानून के विपरीत है। दूसरे शब्दों में, रिमांड के आदेश का सही मायने में पालन किया जाना चाहिए। यह सच है कि इस मामले में उच्च न्यायालय ने मूल रूप से, दिनांक 29.10.2007 के निर्णय के अनुसार मामले को नए सिरे से निपटाने के लिए विचारण न्यायालय को भेज दिया और ऐसा करते हुए, उसने विचारण न्यायालय को प्रतिवादियों को साक्ष्य देने का अवसर देने का भी निर्देश दिया। लेकिन फिर, इस न्यायालय द्वारा इसे संशोधित किया गया और सीए संख्या 5201/2009 के फैसले के अनुसार मामले को आरएफए 1996/2007 के नए सिरे से निपटारे के लिए उच्च न्यायालय को भेज दिया गया और विचारण न्यायालय को आगे का निर्देश केवल उच्च न्यायालय द्वारा निर्देशित साक्ष्य को दर्ज करने और इसे रिपोर्ट के साथ भेजने के लिए था ताकि उच्च न्यायालय प्रतिवादियों के अतिरिक्त दर्ज साक्ष्य को भी ध्यान में रखते हुए अपील का निपटारा कर सके। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि साक्ष्य को अभिलिखित करने और उसे रिपोर्ट के साथ प्रस्तुत करने के लिए विचारण न्यायालय को दिया गया निर्देश पहले से ही रिपोर्ट में मौजूद साक्ष्य को समाप्त नहीं करेगा या विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को दरकिनार करने का प्रभाव नहीं होगा और निर्विवाद रूप से, इसका उद्देश्य केवल उच्च न्यायालय को आरएफए संख्या 1996/2007 पर विचार करने में सक्षम बनाना था, जो न केवल विचारण न्यायालय द्वारा पहले से ही विचार किए गए साक्ष्य के आधार

पर, बल्कि अपने दिनांकित 29.10.2007 के निर्णय के आधार पर प्रतिवादियों के अतिरिक्त अभिलिखित साक्ष्य के आधार पर भी मु.वा.सं.संख्या 6456/1993 में विचारण न्यायालय न्यायालय के निर्णय और डिक्री के खिलाफ चुनौती देता है।

8. अब हम इस मामले को आगे बढ़ाएँगे। वास्तव में, इस बीच, उच्च न्यायालय द्वारा रिमांड के आदेश के अनुसार, विचारण न्यायालय ने मामले को उठाया और इसे प्रतिवादियों के साक्ष्य के लिए पोस्ट किया। मूल प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2 (इसमें पहला अपीलकर्ता और दूसरा मृतक अपीलकर्ता) ने विचारण न्यायालय के समक्ष लिखित कथन में संशोधन के लिए एक आवेदन दायर किया। इसके अलावा, विचारण न्यायालय के समक्ष तीन और आवेदन दायर किए गए थे। (1) अतिरिक्त लिखित बयान दाखिल करने की अनुमति मांगना; (2) 8 दस्तावेज प्रस्तुत करने की अनुमति मांगना; और (3) पीडब्लू-1 को वापस बुलाना। विचारण न्यायालय ने दिनांक 13.11.2007 के आदेश द्वारा केवल दस्तावेजों को प्रस्तुत करने और पीडब्लू-1 को वापस बुलाने की अनुमति के लिए आवेदनों की अनुमति दी। वादी/प्रत्यर्थी ने प्र.सा.सं. 18328/2007 में उच्च न्यायालय के समक्ष इसे चुनौती दी और परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय ने उक्त आदेश दिनांक 13.11.2007 पर रोक लगा दी। इसके बाद इस न्यायालय द्वारा उपरोक्त वर्णित तरीके से सिविल अपील नं. 5201/2009 का निपटारा किया गया। इस अदालत के दिनांक 03.08.2009 के आदेश के अनुसार विचारण न्यायालय ने मामले को उठाया और इसे प्रतिवादियों के साक्ष्य के लिए पोस्ट किया। उन्होंने अं.आ.सं. 8/2009 दायर कर लिखित बयान में संशोधन करने की अनुमति मांगी, जिसे खारिज कर दिया गया। इसके बाद, विचारण न्यायालय में दूसरे प्रत्यर्थी ने मुख्य परीक्षण के बदले शपथ पत्र दायर किया और प्रदर्शनी डी-1 से डी-9 तक चिह्नित किया और उससे भी जिरह की गई। हालाँकि, उन्होंने किसी अन्य गवाह से पूछताछ नहीं की। बाद में, विचारण न्यायालय ने रिकॉर्ड किए गए साक्ष्य को अपनी रिपोर्ट के साथ उच्च न्यायालय को भेज दिया।

8.1 रिपोर्ट और दर्ज किए गए साक्ष्यों की प्राप्ति के अनुसरण में, उच्च न्यायालय ने आरएफए संख्या 1966/ 2007 पर विचार किया। प्रतिवादियों अर्थात्, अपीलकर्ताओं ने उच्च न्यायालय के समक्ष तीन अंतरिम आवेदन दायर किए, जो इस प्रकार हैं:-

- 1) विविध सिविल आवेदन संख्या 10400/2010 अपील में अतिरिक्त आधार 16ए और 16बी को उठाने के लिए आदेश 41 नियम 2 के तहत, जिसे सि.प्र.स. की धारा 151 के साथ पढ़ा जाता है।
- 2) विविध सिविल आवेदन संख्या 11451/2010 अपील में अतिरिक्त आधार 16सी और 16डी उठाने के लिए आदेश 41 नियम 2 के तहत सि.प्र.स. की धारा 151 के साथ पढ़ा जाता है।
- 3) विविध सिविल आवेदन संख्या 11452/2010 लिखित कथन के संशोधन के लिए आदेश 6 नियम 17 के तहत जिसे सि.प्र.स. के साथ पढ़ा जाता है।

8.2 विविध. सिविल आवेदन क्रमांक 10400/2010 पर सहमति के लिए अतिरिक्त आधार जुटाने की अनुमति दी गई। हालाँकि, अन्य दो आवेदनों का जोरदार विरोध किया गया। मुख्य अपील के साथ-साथ ऊपर संदर्भित अन्य दो आवेदनों पर पक्षों को सुनने के बाद, माननीय उच्च न्यायालय ने विचार के लिए निम्नलिखित बिंदु तैयार किए:-

(i) "क्या आवेदन विविध 11452 /सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश VI नियम 17 के तहत अपीलकर्ताओं द्वारा दायर 2010 में लिखित बयान में संशोधन की मांग की गई है। पैराग्राफ 26(बी) से 26(ई) अनुमति के योग्य है या अस्वीकार कर दिया?"

(ii) "चाहे आवेदन विविध. नागरिक संहिता की धारा 151 के साथ 41 नियम 2 आर/डब्ल्यू के तहत दायर सिविल संख्या 11451/2010 अतिरिक्त आधार जुटाने के लिए अपीलकर्ताओं द्वारा

प्रक्रिया इस अपील में ग्राउंड नंबर 16सी और 16डी की अनुमति दी जानी है या बर्खास्त कर दिया गया?"

(iii) जैसा मुकदमा लाया गया है वह अनुरक्षनियता योग्य है या नहीं?

(iv) क्या मुकदमा आवश्यक गैर पक्षकारों के लिए बुरा है?

(v) क्या चौदहवें अतिरिक्त सिविल जज के द्वारा पारित डिक्री और आदेश निर्णय दिनांक 4-7-2007 को मु.वा.सं.संख्या 6456/1993 में उलट दिया गया है, पुष्टि या संशोधित किया गया है?

(vi) कौन सा आदेश?"

9. दलीलों पर विस्तृत रूप से विचार करने के बाद, प्रतिद्वंद्वी दलीलों के संदर्भ में दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य, उच्च न्यायालय ने इसमें अपीलार्थियों के खिलाफ और इसमें प्रत्यर्थी के पक्ष में तैयार किए गए बिंदुओं का जवाब दिया। विविध आवेदन संख्या 11451/2010 और 11452/2010, जिसमें क्रमशः लिखित कथन में संशोधन और अतिरिक्त आधारों को उठाने की अनुमति मांगी गई है। आधार सं.16(सी) और 16(डी) को खारिज कर दिया गया। अपीलार्थियों द्वारा उसमें उठाए गए मुकदमे की स्थिरता के संबंध में बिंदु संख्या 3 जो कि मुकदमे के अनुरक्षणीयता से संबंधित है, वाद को अपीलार्थी द्वारा उठाया गया फलस्वरूप अस्वीकार कर दिया गया और वाद को अनुरक्षनिय रखा गया। इस प्रश्न पर की क्या वाद असंयोजक आवश्यक पक्षकारों के लिए खराब है, बिंदु 4 इस सम्बन्ध में नकारात्मक है। तैयार किए गए बिंदुओं पर निष्कर्षों और निष्कर्षों के आधार पर यह अभिनिर्धारित किया गया कि प्रतिवादी/अभियोक्ता विचारण न्यायालय द्वारा घोषित निर्णय और डिक्री का हकदार है और इसके परिणामस्वरूप अपील को लागत के साथ खारिज कर दिया गया और विचारण न्यायालय के फैसले और डिक्री की पुष्टि की गई। इसलिए यह अपील की गई है।

10. अपीलार्थियों के वरिष्ठ अधिवक्ता सुश्री किरण सूरी और प्रत्यर्थी के वरिष्ठ अधिवक्ता श्री नरेंद्र हुड्डा को सुना गया ।

11. अपीलकर्ताओं ने उच्च न्यायालय के फैसले पर हमला करने के लिए कई आधार उठाए हैं। यह अन्य बातों के साथ-साथ तर्क दिया जाता है कि वादी/प्रत्यर्थी यहाँ वादी 'बी' अनुसूची संपत्ति पर अपना अधिकार स्थापित करने में विफल रहा था। इसके अलावा, यह तर्क दिया जाता है कि उच्च न्यायालय इस तर्क पर विचार फरमाने में विफल रहा कि विषय वाद वास्तव में प्रत्यर्थी/अभियोक्ता द्वारा श्री हनुमैया के कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड पर लाने में विफलता के कारण समाप्त मुकदमा दिया गया था, तीसरे प्रत्यर्थी जिन्होंने विषय वाद विचाराधीनता रहने के दौरान अंतिम सांस ली थी। यह उनका आगे का तर्क है कि श्री राम @ राममूर्ति, मृतक दूसरे प्रत्यर्थी ने श्रीमन माधव संघ से मुकदमा संपत्ति खरीदी थी जो एक संगठन है और श्री विट्ठल राव ने 05.10.2000 पर संयुक्त मुकदमा से पूर्व संगठन के अधिकृत प्रतिनिधि द्वारा निष्पादित बिक्री विलेख के अनुसार और इसलिए, उच्च न्यायालय को विचारण न्यायालय के फैसले और डिक्री की पुष्टि नहीं करनी चाहिए थी।

12. हम पहले से ही इस तथ्य पर ध्यान दें चुके हैं कि विविध सिविल आवेदन के संशोधन के लिए प्रार्थना करने वाला सिविल आवेदन पैराग्राफ 26(बी) से 26(ई) को शामिल करके और अपील में अतिरिक्त आधार उठाने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था। उन प्रार्थनाओं को तैयार करने वाले बिंदुओं पर उच्च न्यायालय द्वारा प्रासंगिक तथ्यों के आदान-प्रदान के कारण संयुक्त रूप से विचार किया गया था। प्रस्तावित संशोधन का स्वीकृत उद्देश्य स्पष्ट मुकदमा से इस तर्क को लाना था कि मुकदमे की संपत्ति मृतक दूसरे अपीलकर्ता द्वारा श्रीमान माधव संघ और श्री विट्ठल राव से दिनांकित 05.10.2000 बिक्री विलेख के अनुसार खरीदी गई थी।

13. निसंदेह , इस मामले में विचारण न्यायालय ने 04.07.2007 और मूल प्रत्यर्थी 1 और 2 पर मुकदमे का फैसला सुनाया। इस अपील में

प्रथम अपीलकर्ता और मृतक द्वितीय अपीलकर्ता ने अपील को प्राथमिकता दी। आरएफए संख्या 1966/2007 उसी को चुनौती देता है। उक्त अपील में, आदेश XLI नियम 27 सि.प्र.स के तहत एक आवेदन दायर किया गया था जिसमें अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति मांगी गई थी, जिसमें यह तर्क दिया गया था कि उन्हें साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर नहीं दिया गया था। उक्त अपील का निपटारा उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 29.10.2007 के निर्णय और डिक्री के अनुसार किया गया, जिसके तहत उक्त आवेदन की अनुमति दी गई और उसमें अपीलार्थी /मूल प्रत्यर्थी 1 और 2 को विचारण न्यायालय के समक्ष अतिरिक्त साक्ष्य देने की अनुमति दी गई। इसके अलावा, कथित प्रत्यर्थियों से जिरह करने का अवसर प्रत्यर्थी/अभियोक्ता को दिया गया था। जहां तक 'ख' अनुसूची संपत्ति का संबंध है, उसके गुण-दोष के आधार पर मामले का निपटारा करने के लिए उसके तहत विचारण न्यायालय को एक निर्देश भी दिया गया था। उच्च न्यायालय के उक्त निर्णय और दिनांक 29.10.2007 दिनांकित डिक्री से यह असंतुष्ट है कि प्रत्यर्थी/अभियोक्ता ने इस न्यायालय के समक्ष एसएलपी (सी) सं.1279/2008 से उत्पन्न 2009 की सिविल अपील दायर की और जिसका निपटारा उच्च न्यायालय के दिनांक 29.10.2007 दिनांकित निर्णय और डिक्री को संशोधित करने के लिए किया गया, जिसमें विचारण न्यायालय को साक्ष्यों को दर्ज करने का निर्देश दिया गया जैसा कि 'उच्च न्यायालय द्वारा निर्देशित किया गया है' और उच्च न्यायालय और ऐसे अन्य निर्देश जिनका यहाँ पहले उल्लेख किया गया है रिकॉर्ड को प्रथम अपील न्यायालय में प्रेषित करने का निर्देश दिया गया। । इसके बाद उच्च न्यायालय द्वारा विवादित आदेश पारित किया गया, जिसके तहत विचारण न्यायालय के फैसले और डिक्री की पुष्टि की गई। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अपीलार्थियों के विरुद्ध और प्रत्यर्थी के पक्ष में निष्कर्ष समवर्ती हैं। आम तौर पर, भारतीय संविधान में अनुच्छेद 136 के तहत दायर विशेष अनुमति द्वारा असाधारण परिस्थितियों के अभाव में निष्कर्ष समवर्ती होने पर गहराई से विचार करन कोई नियम नहीं है। फिर भी, हम निष्कर्षों और पक्षों की दलीलों

से उचित तरीके से निपटने के लिए इच्छुक हैं तथा इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए कि अनुशीर्षक वाली अपील वर्ष 2011 की है और पक्षों को यथास्थिति बनाए रखने के लिए एक अंतरिम निर्देश 25.02.2011 पर जल्द से जल्द पारित किया गया था।

14. हम इस निपटायी हुई स्थिति से अनभिज्ञ नहीं हैं कि दलीलों में संशोधन के लिए प्रार्थनाओं से निपटने में न्यायालयों को अति तकनीकी दृष्टिकोण से बचना चाहिए। लेकिन साथ ही, हमें इस स्थिति की याद दिलानी चाहिए कि लिखित बयान में संशोधन के लिए एक आवेदन के माध्यम से केवल अनुरोध पर इसे प्रदान नहीं किया जा सकता है, विशेष रूप से अपीलीय चरण में, जहां, प्रश्न में जो कहा जाता है वह ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित निर्णय और डिक्री है, और दूसरे शब्दों में, प्रतिकूल डिक्री के बाद और वास्तविक, स्थायी कारण के बिना। संक्षेप में, यह विचार करने के लिए कि ऐसी प्रार्थना स्वीकार्य है या नहीं, विशेष मामले से संबंधित परिस्थितियों को ध्यान में रखा जाना चाहिए और इसमें कोई संदेह नहीं है, यह केवल दुर्लभतम परिस्थितियों में ही स्वीकार्य है। मौजूदा मामले में, दिनांक 01.09.1995 के आदेश के अनुसार विचारण न्यायालय द्वारा वादपत्र में संशोधन की प्रार्थना की अनुमति दी गई थी। तदनुसार, वादी द्वारा संशोधन किया गया था। निर्विवाद रूप से, उसके बाद, एक वर्ष या उसके आसपास की अवधि के दौरान प्रतिवादियों को अतिरिक्त लिखित बयान दर्ज करने के लिए आठ से अधिक अवसर दिए गए, यदि कोई हो।

संक्षेप में कहा जाए तो, विशेष मामले में उपस्थित परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए इस बात पर विचार किया जाना चाहिए कि क्या ऐसी प्रार्थना स्वीकार्य है या नहीं और इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह केवल दुर्लभतम परिस्थितियों में ही स्वीकार्य है। वर्तमान मामले में, अभियोग में संशोधन करने के अनुरोध को निचली अदालत द्वारा दिनांक 01.09.1995 के आदेश के अनुसार अनुमति दी गई थी। तदनुसार, वादी द्वारा संशोधन किया गया था। निर्विवाद रूप से, इसके बाद, एक वर्ष या उसके आसपास की अवधि के दौरान प्रतिवादियों को अतिरिक्त लिखित बयान, यदि कोई

हो, दायर करने के लिए आठ से अधिक अवसर दिए गए। निस्संदेह, अभिलेख पर मौजूद सामग्री से पता चलेगा कि अवसरों का लाभ नहीं उठाया गया था और कोई अतिरिक्त लिखित बयान दायर नहीं किया गया था। इसके बाद दलीलों के आधार पर मुद्दे तैयार किए गए। जाहिर है, प्रतिवादियों ने उन कारणों के लिए कोई सबूत पेश नहीं किया जिनकी उन्हें सबसे अच्छी तरह से जानकारी थी। इसके बाद जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, मुकदमे का फैसला सुनाया गया। हमने बाद के सभी घटनाक्रमों पर भी विस्तार से चर्चा की है, जो अंततः 2007 के आरएफए नंबर 1966 में दिनांक 09.09.2010 के आक्षेपित फैसले में परिणत हुआ। जिसमें 2009 की सिविल अपील संख्या 5201 में इस न्यायालय के फैसले के संदर्भ में 29.10.2007 के उच्च न्यायालय के फैसले और डिक्री में मामूली संशोधन शामिल है। इस न्यायालय द्वारा उक्त सिविल अपील में दिए गए निर्णय के अनुसरण में, उच्च न्यायालय के दिनांक 09.09.2010 के निर्णय में उत्तरजीवी निर्देशों के संदर्भ में, जो वस्तुतः 2009 के सीए संख्या 5201 के फैसले के साथ दूसरे प्रतिवादी के साथ जुड़ गया, अर्थात् मृत दूसरे अपीलकर्ता ने 16.09.2009 को अपने परीक्षा-प्रमुख के बदले में अपना हलफनामा दायर किया था। और प्रदर्शन डी-1 से डी-9 तक चिह्नित किया गया। इसके बाद उनसे प्रतिपरीक्षा की गई। प्रतिवादियों की ओर से किसी अन्य गवाह से पूछताछ नहीं की गई।

15. रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय से पता चलेगा कि मूल प्रतिवादी 1 और 2, जो उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता थे, उन्होंने उच्च न्यायालय के समक्ष लिखित बयान में संशोधन के साथ-साथ अपील में अतिरिक्त आधार जुटाने की अनुमति के लिए उनकी प्रार्थनाओं के समर्थन में विभिन्न तर्क उठाए और उन्हें हमारे सामने भी दोहराया गया। यह तर्क दिया गया है कि ऐसी प्रार्थनाओं को मांगने में देरी अपने आप में उल्लिखित विविध नागरिक आवेदनों में की गई प्रार्थनाओं को अस्वीकार करने का कारण नहीं हो सकती है। और इसके अलावा, ऐसी प्रार्थनाओं की अनुमति देने से, किसी भी तरह से, यहां प्रतिवादी/उसमें प्रतिवादी पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

इस निर्णय में इससे पहले उल्लिखित घटनाओं के कालक्रम को स्पष्ट रूप से उक्त आवेदनों पर विचार करते समय और उन प्रार्थनाओं के लिए तैयार किए गए बिंदुओं का उत्तर देते समय उच्च न्यायालय के साथ तौला गया था। तथ्य यह है कि प्रतिवादियों को वाद-विवाद में संशोधन के बाद 07.03.1996 से मुद्दे तय होने तक की अवधि के बीच कम से कम आठ बार अतिरिक्त लिखित बयान दाखिल करने का अवसर दिया गया था अर्थात् 15.04.1997, नि.प्र.अ. 1966/2007 में दायर अंतर्वर्ती आवेदन में, जिसके आधार पर ट्रायल कोर्ट को निर्देश दिया गया था कि वह प्रतिवादियों को 29.10.2007 को पारित निर्णय और डिक्री के अनुसार सबूत पेश करने का अवसर दे, उन्होंने यह तर्क देते हुए सबूत पेश करने की अनुमति मांगी थी कि उन्हें साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर से वंचित कर दिया गया और उस समय भी लिखित बयान में संशोधन के लिए कोई अनुमति नहीं मांगी गई थी, इस पर उच्च न्यायालय ने विचार किया। जाहिर तौर पर, उच्च न्यायालय ने यह भी देखा कि यदि उस स्तर पर लिखित बयान में संशोधन की अनुमति दी गई थी, तो नए मुद्दों को तैयार करने की आवश्यकता होगी और पार्टियों को अपने अधिकारों के लिए आंदोलन करना होगा जैसे कि डे नोवो परीक्षण में। इसके अलावा, उच्च न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित पहलुओं पर भी विचार किया:

जो, प्रतिवादियों द्वारा दायर लिखित बयान में उन्होंने अपने बचाव का खुलासा नहीं किया और साथ ही, उन्होंने यह भी दलील नहीं दी कि मुकदमे की संपत्ति पर उनका कब्जा है।

जो उनकी दलील, अनिवार्य रूप से 'जस्ट ट्रेटी' के सिद्धांत को आकर्षित करती है, जिसकी लैटिन में अभिव्यक्ति का अर्थ है 'तीसरे पक्ष का अधिकार', उनके अनुसार, तीसरे पक्ष, श्रीमान माधव संघ हैं, जो एक संगठन है और श्री विट्ठल राव, यह साक्ष्य में आया है कि उन तीसरे पक्षों ने एचआरसी सं. 10020/ 1991 के रूप में प्रतिवादी/वादी को बेदखल करने के लिए एक याचिका दायर की थी। तथ्य यह है कि प्रतिवादियों ने दलील दी थी कि मुकदमे की संपत्ति का स्वामित्व उक्त तीसरे पक्ष के पास

था और उन्होंने विशेष रूप से कब्जे का दावा नहीं किया था और इसके बाद उन्होंने उन दोनों दलों के बीच हुए बिक्री समझौते के तहत एक याचिका दायर करने की मांग की थी। अर्थात्, प्रथम प्रतिवादी/प्रथम अपीलकर्ता अर्थात्, प्रदर्शनी डी-1 दिनांक 01.03.1993 को सूट अनुसूची संपत्ति का कब्जा प्रथम अपीलकर्ता को सौंप दिया गया था। लेकिन उन्हें दूर करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा सौंपा गया महत्वपूर्ण कारण यह है कि पहले प्रतिवादी/प्रथम अपीलार्थी ने बॉक्स में प्रवेश नहीं किया था और मृत दूसरे प्रतिवादी/दूसरे प्रतिवादी ने डीडब्ल्यू-1 के रूप में जांच के दौरान अपने मुख्य परीक्षण के दौरान ही यह स्वीकार किया था कि इसमें प्रतिवादी/वादी के पास मुख्य परीक्षा के बदले दायर किए गए उसके हलफनामे के अनुच्छेद 8 के तहत मुकदमे की अनुसूची 'क' संपत्ति (जिसमें 'ख' शेड्यूल भी शामिल है) का कब्जा था। इसके अलावा, यह नोट किया गया कि जिरह के दौरान डीडब्ल्यू-1 ने स्वीकार किया कि प्रदर्शनी डी-1 की तारीख के अनुसार, संपत्ति का कब्जा नहीं लिया गया था क्योंकि श्रीमान माधव संघ ने कब्जा सुरक्षित करने और इसे पहले प्रतिवादी को सौंपने का आश्वासन दिया था। इस प्रकार रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्रियों से सामने आई परिस्थितियों में और जब उच्च न्यायालय द्वारा लिखित बयान में संशोधन की अनुमति देने से इनकार करने के लिए ऐसे पहलुओं और सबूतों को ध्यान में रखा गया, तो हमें इसमें हस्तक्षेप करने का कोई कारण या औचित्य नहीं मिला।

16. अपने दृष्टिकोण को पुष्ट करने के लिए, हम कुछ अन्य पहलुओं पर भी विचार करेंगे। डीडब्ल्यू-1 द्वारा उपर्युक्त स्वीकारोक्ति के परिप्रेक्ष्य में, डीडब्ल्यू-1 द्वारा उपर्युक्त स्वीकारोक्ति के मददेनजर, लिखित बयान में संशोधन करके नई याचिका लाने का प्रयास किया गया कि दूसरे प्रत्यर्थी (मृत दूसरे अपीलकर्ता) प्रदर्शनी डी-2, 05.10.2000 दिनांकित बिक्री विलेख मुकदमा वाद अनुसूची संपत्ति खरीदी थी, को देखना होगा। चूंकि स्वीकार्य और निर्विवाद मुकदमा से जिस वाद से अपील की जाती है, वह स्वामित्व अधिकार पर आधारित था, इसलिए इस अपील में प्रदर्शनी डी-2 बिक्री विलेख की वैधता पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है और उच्च

न्यायालय द्वारा सही तरीके से विचार नहीं किया गया है। स्पष्ट रूप से, उच्च न्यायालय ने लिस पेंडेंस के सिद्धांत के आलोक में उसी पर कार्यवाई करने से इनकार कर दिया। यहां तक कि अगर यह माना जाता है कि संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 52 के तहत प्रावधान लागू नहीं होते हैं, तो भी इस बात पर विवाद नहीं किया जा सकता है कि प्रावधान में निहित सिद्धांत मामले में लागू होता है। यह एक लगभग तय स्थिति है कि जहां भी टीपी अधिनियम लागू नहीं होता है, वहां उक्त अधिनियम के उक्त प्रावधान में ऐसा सिद्धांत, जो न्याय, समानता और सद्भावना पर आधारित है, उसी तरह की परिस्थितियों में लागू होता है, जैसे अदालत बिक्री आदि। अधिकार के हस्तांतरण पेंडेंट लिनदे के धारा 52 के अर्थ के भीतर संपत्ति का हस्तांतरण होगा और इस मुकदमा, सं.ह. अधिनियम की धारा 52 का तात्पर्य यह है कि यदि किसी मुकदमे के लंबित रहने के मुकदमेबाजी का इंतजार संपत्ति में अधिकार का कोई हस्तांतरण होता है तो ऐसा हस्तांतरण कानून की नजर में गैर-महत्वपूर्ण होगा यदि यह संबंधित संपत्ति में मुकदमे के मुकदमा दूसरे पक्ष के हित पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा। हम जल्दबाजी में यह जोड़ सकते हैं कि धारा 52 का प्रभाव यह है कि उस संपत्ति के संबंध में मुकदमे में सफल पक्ष का अधिकार अलगाव से प्रभावित नहीं होगा, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है स्थानान्तरण का लेन-देन अमान्य है। **थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड बनाम नानक बिल्डर्स एंड इन्वेस्टर्स प्राइवेट लिमिटेड**, के निर्णय में, इस न्यायालय ने संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 के प्रावधान को वास्तव में अन्यथा स्थानान्तरण या हस्तांतरण को रद्द नहीं किया, बल्कि इसे मुकदमेबाजी के पक्षकारों के अधिकारों के अधीन बना दिया जाए। इस स्थिति के संबंध में कोई संदेह नहीं हो सकता है कि उक्त सिद्धांत के सिद्धांतों को लागू करने से निषेध मुकदमे की शुरुआत के साथ अपना प्रभाव डालेगा। जैसा भी हो, हमें यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि अपीलीय चरण में दायर लिखित बयान में संशोधन के लिए आवेदन पर विचार करते समय उच्च न्यायालय का इस निष्कर्ष पर पहुंचना पूरी तरह से उचित था कि वास्तव में, नए मुद्दों को तैयार करना आवश्यक हो गया

है और पार्टियों को अपने अधिकारों के लिए आंदोलन करने के लिए बाध्य किया गया है जैसे कि नए सिरे से मुकदमा चलाया जा रहा हो।

हमने उपरोक्त पहलुओं का उल्लेख केवल इस बात को स्पष्ट करने के लिए किया है कि चूंकि विषय मुकदमा केवल स्वामित्व शीर्षक पर आधारित है, अर्थात्, पूर्व कब्जे के आधार पर मृतक दूसरे अपीलकर्ता द्वारा मुकदमे के लंबित रहने तक संपत्ति की खरीद की याचिका लाने के लिए लिखित बयान में संशोधन के लिए निवेदन के निष्कर्ष और परिणामी अस्वीकृति को गंभीर अन्याय के परिणामस्वमुकदमा आधार नहीं कहा जा सकता है।

17. इस संदर्भ में एक अन्य निर्विवाद स्थिति का उल्लेख करना भी अनुचित नहीं है। रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री से पता चलता है कि निर्णय पारित करने और आदेश देने से पहले विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थियों को अतिरिक्त लिखित विचाराधीनता दायर करने के लिए कई अवसर प्रदान किए थे, लेकिन वे न केवल अतिरिक्त लिखित विचाराधीनता दायर करने में विफल रहे, बल्कि लिखित विचाराधीनता में संशोधन के लिए कोई आवेदन दायर करने में भी विफल रहे। यह एक तथ्य है कि प्रत्यर्थियों ने विचारण न्यायालय के समक्ष लिखित बयान में संशोधन के लिए एक आवेदन दायर किया था, जब मामला सि.अ. सं.5201/2009 में इस न्यायालय के आदेश के अनुसार विचारण न्यायालय को भेजा गया था, ताकि केवल उच्च न्यायालय को एक रिपोर्ट के साथ साक्ष्य दर्ज करने के उद्देश्य से उच्च न्यायालय को आरएफए सं.1966/2007 का निपटारा करने में सक्षम बनाया जा सके। इसी प्रकार यह भी एक निर्विवाद तथ्य है कि नि.प्र.अ. सं.1996/2007 में लिखित कथन में संशोधन की अनुमति देने के लिए आवेदन दायर करते समय भी प्रत्यर्थियों ने देरी का कोई कारण नहीं बताया था और जब मूल कार्यवाही विचारण न्यायालय के समक्ष लंबित थी तब विचारण न्यायालय के समक्ष ऐसा आवेदन दायर नहीं करने के लिए कोई उचित स्पष्टीकरण के रूप में सौंपा गया था एक कारण यह है कि वे गलती और निरीक्षण के कारण एक अतिरिक्त लिखित बयान दायर नहीं

कर सके। लिखित बयान में संशोधन के लिए आवेदन दाखिल न करने का कोई अन्य कारण नहीं बताया गया था। जो कारण बताया गया वह यह था कि वे अतिरिक्त

¹लिखित बयान दाखिल नहीं कर सके लिखित विवरण में संशोधन के लिए आवेदन दाखिल न करने का कोई अन्य कारण नहीं बताया गया।

18. प्रासंगिक स्थिति में, निर्णय को संदर्भित करना प्रासंगिक है। **गायत्री महिला कल्याण संघ बनाम गौरम्मा और एनर²** मामले में इस न्यायालय का जिसमें पंडित मामले में इस न्यायालय के निर्णय में टिप्पणी की गई है। **ईश्वरदास बनाम मध्य प्रदेश राज्य अन्य अन्य³** पैरा 34 पर

जिसे समझौते के साथ उद्धृत किया गया था, जो इस प्रकार है:-

“34. ईश्वरदास में, इसे निम्नानुसार देखा गया है (एससीसी पी. 166, पैरा 5):

5. अपील न्यायालय के खिलाफ अभिवचनों में संशोधन की अनुमति देने में कोई बाधा या बाधा नहीं है ताकि कोई पक्ष नई याचिका दायर कर सके। केवल इतना आवश्यक है कि अपील न्यायालय को उन प्रसिद्ध सिद्धांतों का पालन करना चाहिए जिनके अधीन वाद के संशोधन आमतौर पर दिए जाते हैं। स्वाभाविक रूप से उन परिस्थितियों में से एक जिस पर संशोधन की अनुमति देने से पहले विचार किया जाएगा, वह है इस तरह के संशोधन की मांग करने वाले आवेदन में देरी और यदि अपीलीय स्तर पर किया जाता है, तो इसका कारण है कि इसे निचली विचारण न्यायालय में क्यों नहीं मांगा गया था। यदि आवश्यक सामग्री जिस पर संशोधन से उत्पन्न याचिका पर निर्णय लिया जा सकता है, पहले से ही है, तो संशोधन को अन्यथा की तुलना में अधिक आसानी से मंजूरी दी जा सकती है। लेकिन, अपीलीय स्तर पर संशोधन की

अनुमति देने वाले अपील न्यायालय के खिलाफ केवल इसलिए कोई निषेध नहीं है क्योंकि आवश्यक सामग्री पहले से ही न्यायालय के समक्ष नहीं है।”

19. उसी को उद्धृत करने के बाद यह **गायत्री महिला वेलफेयर एसोसिएशन** का मामला (उपरोक्त) में देखा गया था। इस प्रकार है:-

“ये टिप्पणियां स्पष्ट रूप से इंगित करती हैं कि किसी संशोधन को मंजूरी देने से पहले जिन परिस्थितियों पर विचार किया जाएगा, उनमें से एक है इस तरह के संशोधन की मांग करने वाले आवेदन में देरी और यदि अपीलीय ऋषि में किया जाता है, तो इसका कारण है कि इसे निचली विचारण न्यायालय में क्यों नहीं मांगा गया था।”

20. यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि मामले में भी, जैसा कि पहले कहा गया था, लिखित बयान में संशोधन की मांग करने या अतिरिक्त लिखित बयान दाखिल करने में काफी देरी हुई थी और इस बात का कोई स्थायी कारण नहीं बताया गया था कि निचली विचारण न्यायालय में ऐसी प्रार्थनाएं क्यों नहीं मांगी गईं, जबकि मूल कार्यवाही उसके समक्ष लंबित थी। यह भी ध्यान दें योग्य है कि इस तरह की प्रार्थनाएँ उच्च न्यायालय के समक्ष तब भी नहीं की गई थीं जब उच्च न्यायालय ने शुरू में आरएफए सं.1966/2007 का निपटारा दिनांक 29.10.2007 के निर्णय के अनुसार किया था और इस न्यायालय के समक्ष सीए सं. 5201/2009 में उक्त निर्णय के खिलाफ निर्देश दिया गया था।

21. उपर्युक्त प्रासंगिक स्थिति में, सि.अ.सं. 5201/2009 में इस न्यायालय द्वारा पारित रिमांड के आदेश का प्रभाव और प्रभाव बहुत प्रासंगिकता रखता है। हमने इस पहलू पर विचार किया है और एक निष्कर्ष पर पहुंचे हैं जैसा कि पैराग्राफ 5 (उपरोक्त) से देखा जा सकता है। यदि नि.प्र.अ. सं. 1996/2007 में उच्च न्यायालय के निर्णय को इस न्यायालय द्वारा सि.अ.सं. 52001/2009 में निर्णय के मुकदमा संशोधित नहीं किया

गया था, तो इसका प्रभाव मुकदमे को पूरी तरह से पुनर्जीवित करने का होता और ऐसी स्थिति में, मुकदमे को लंबित माना जाना चाहिए था। उस संदर्भ में, इस न्यायालय के निर्णय के पैराग्राफ 16 का उल्लेख करना उचित है। **यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया में भारत अन्य कलकत्ता बनाम अभिजीत टी कंपनी (पी) लिमिटेड और अन्य** अन्य जो इस प्रकार है:-

“16. लेकिन, अब यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि अपील न्यायालय द्वारा निचली विचारण न्यायालय को रिमांड का आदेश, जिसने मुकदमे का निपटारा किया था, अपील विचारण न्यायालय द्वारा अंत में तय किए गए मामलों, यदि कोई हो, को छोड़कर मुकदमे को पूरी तरह से पुनर्जीवित मुकदमा है। एक बार मुकदमा बहाल हो जाने के बाद, कानून की नजर में, इसे लंबित माना जाना चाहिए-शुरू से ही जब इसे स्थापित किया गया था। एकल न्यायाधीश द्वारा पारित मुकदमे का निपटारा करने वाला निर्णय, जिसे दरकिनार कर दिया जाता है, पूरी तरह से समाप्त हो जाता है और निचली विचारण न्यायालय में मुकदमे की निरंतरता को कानून के मुकदमा में बहाल किया जाता है। मुकदमे को रिमांड आदेश की तारीख पर नए सिरे से शुरू किए गए मुकदमे के मुकदमा में नहीं माना जा सकता है। अन्यथा सीमा के बारे में गंभीर सवाल उठेंगे। वास्तव में, यदि इसके पूर्व मुकदमा से पहले कोई साक्ष्य दर्ज

किया गया था, तो यह रिमांड किए गए मुकदमे में साक्ष्य होगा और यदि कोई अंतर्वर्ती आदेश पहले पारित किया गया था, तो वे पुनर्जीवित होंगे। रिमांड के मामले में, यह ऐसा है जैसे कि मुकदमे का कभी मुकदमा नहीं किया गया था (किसी भी निर्णय के अधीन जो अपीलीय निर्णय में अंतिम हो गया है)। स्थिति अलग हो सकती थी। यदि अपील का एक बार और हमेशा के मुकदमा निपटारा कर दिया गया था और मुकदमा वापस नहीं लिया गया था।”

22. आरएफए सं.1996/2007 में रिमांड आदेश के खिलाफ निर्देशित सिविल अपील सं.5201/2009 में इस न्यायालय के 03.09.2009 के निर्णय को देखते हुए, उच्च न्यायालय के फैसले को इसमें मिला दिया गया। उसी के अनुसार, विचारण न्यायालय के समक्ष कार्यवाही का दायरा केवल प्रतिवादियों के अतिरिक्त साक्ष्य को दर्ज करने और उसे उच्च न्यायालय को प्रेषित करने तक सीमित था ताकि उच्च न्यायालय नि.प्र.अ. सं.1996/2007 का नए सिरे से निपटान कर सके। संक्षेप में, तय स्थिति को देखते हुए, विचारण न्यायालय रिमांड आदेश के विपरीत अपने समक्ष कार्यवाही का दायरा नहीं बढ़ा सकती थी और इसलिए, विचारण न्यायालय लिखित बयान में संशोधन के लिए आवेदन को खारिज करने में पूरी तरह से सही थी। इस संदर्भ में, **रुखमानंद बनाम दीनबंध**⁵ में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय का निर्देश प्रासंगिक है। वह इस प्रकार है:-

“यह स्थापित कानून है कि जब किसी वाद को कुछ विशिष्ट निर्देशों के साथ नए सिरे से निर्णय के लिए भेजा जाता है, तो रिमांड के बाद विचारण न्यायालय की अधिकारिता रिमांड आदेश की शर्तों पर निर्भर करता है और विचारण न्यायालय या तो रिमांड आदेश में निर्दिष्ट मामलों के अलावा अन्य मामलों पर विचार नहीं कर सकता है, या अपनी सीमा से बाहर आने वाले प्रश्नों में प्रवेश नहीं कर सकता है। इसलिए, विद्वान विचारण न्यायाधीश के पास उन अभिवचनों में संशोधन की अनुमति देने की कोई अधिकारिता नहीं था जो रिमांड आदेश के दायरे से बाहर थे।”

23. परिस्थितियों की समग्रता में, विशेष रूप से उच्च न्यायालय द्वारा लिखित कथन के संशोधन के लिए अनुरोध को अस्वीकार करने के लिए सौंपे गए प्रासंगिक कारणों को ध्यान में रखते हुए और देरी और उसके लिए कोई कारण प्रस्तुत करने में विफलता और यहां उल्लिखित कारणों पर ध्यान देते हुए, इससे पहले कि हम लिखित कथन के संशोधन के लिए अनुरोध की अस्वीकृति के साथ किसी भी विकृति या अवैधता को रखने का कोई कारण नहीं देखते हैं।

24. हमने न्यायालयों के निर्णयों में सहमति के बिंदुओं को नीचे नोट किया है। वाद की स्थिरता के सवाल पर, क्या वाद आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के लिए बुरा है और यह भी कि क्या मूल तीसरे प्रतिवादी की मृत्यु पर सभी कानूनी उत्तराधिकारियों के गैर-प्रतिस्थापन के सभी प्रतिवादियों के खिलाफ वाद को समाप्त कर दिया जाना चाहिए था, न्यायालय ने अपीलार्थियों के खिलाफ एक ही निष्कर्ष दिए।

25. हम यह समझने में असमर्थ हैं कि वाद की विचारणीयता के संबंध में याचिका विचार कैसे उत्पन्न हुई। अपीलार्थियों का तर्क है कि यह विशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 6 के तहत दायर किया गया था और सि.अ.सं. 5201/2009 का निपटान करते हुए इस अदालत ने वादी/ प्रत्यर्थी के खिलाफ निर्णय दिया कि मुकदमा विशिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के तहत दायर नहीं किया गया है। अतः, अपीलकर्ताओं के अनुसार, वादी/प्रतिवादी द्वारा कब्जे के लिए दावा की गई अनुतोष विचार करने योग्य नहीं थी क्योंकि वह केवल मालिकाना हक का दावा करने वाला व्यक्ति था और मूल प्रतिवादी सं.2/मृत अपीलकर्ता सं. वाद अनुसूची संपत्ति वैध मालिक था।

हालाँकि पहली नज़र में ये दलीलें आकर्षक और स्वीकार्य प्रतीत होती हैं, लेकिन तथ्य यह है कि अभिलेख में मौजूद सामग्रियों को देखते हुए, ये पूरी तरह से असमर्थनीय हैं और उनके खिलाफ सही ठहराए गए हैं।

26. यह सच है कि इसमें प्रत्यर्थी/वादी का मामला था कि मू.वा.सं. 6456/1993 में विशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 6 के तहत दायर किया था और सि.अ.सं. 5201/2009 में निर्णय के बाद भी उसने उक्त प्रश्न को फिर से उठाने का प्रयास किया था। लेकिन हम उच्च न्यायालय के साथ पूरी तरह से सहमत हैं कि यह प्रश्न कि क्या वाद विशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 6 के तहत है, अब विचार के लिए उपलब्ध नहीं है क्योंकि यह इस अदालत द्वारा सि.अ.सं. 5201/2009 के फैसले में अन्यथा अभिनिर्धारित किया गया था और इस तरह यह अंतिमता प्राप्त कर चुका था।

सि.अ.सं. 5201/2009 में निर्णय के आलोक में यह निष्कर्ष कि मू.वा. सं.6456/1993 विशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 6 के तहत नहीं है, पुनर्विचार योग्य नहीं है। जाहिर है, इस प्रकार अभिनिर्धारित करने के बाद भी और उच्च न्यायालय के दिनांक 29.10.2007 के निर्णय को संशोधित करने पर इस न्यायालय ने केवल आरएफए सं. 1996/2007 को नए सिरे से निपटान का निर्देश दिया और इस संबंध में विचारण न्यायालय को प्रतिवादियों के अतिरिक्त साक्ष्य को दर्ज करने और एक रिपोर्ट के साथ इसे उच्च न्यायालय को प्रेषित करने का निर्देश दिया गया।

27. निर्विवाद रूप से, इसमें प्रत्यर्थी/वादी का मामला प्रत्यर्थी द्वारा पूर्व कब्जे और अवैध विस्थापन पर आधारित है। अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान अभि.सा.-1 में भी प्रत्यर्थी ने कहा कि यह विषय वाद में स्वामित्व के अधिकार का दावा नहीं कर रहा है। सवाल यह है कि अपीलकर्ता यह दावा कैसे कर सकते हैं कि ऐसा वाद विचारणीय नहीं है। यह भी एक तथ्य है कि प्रतिवादियों की दलीलों और साक्ष्यों की सावधानीपूर्वक जांच करने के बाद, उच्च न्यायालय ने, विवादित निर्णय के अनुसार, यह अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादियों द्वारा वादी / प्रत्यर्थी के मामले का विरोध करने के लिए जो कुछ भी उठाया गया है वह कुछ और नहीं बल्कि एक तर्क है जो "जस टर्टी" के सिद्धांत को आकर्षित करती है, जिसका लैटिन में अर्थ है 'तीसरे पक्ष का अधिकार।' वास्तव में, यह संपत्ति में भाग के दावे के खिलाफ एक याचिका है, जो बचाव में उठाया गया है कि किसी तीसरे पक्ष को दावेदार की तुलना में बेहतर अधिकार है। इस संदर्भ में, *आर.एफ.वी. ह्यूस्टन, सैल्मंड ऑन द लॉ ऑफ टॉर्ट्स* 4 (17वीं संस्करण, 1977) का उल्लेख करना प्रासंगिक है, जिसमें यह देखा गया कि अतिचार की कार्रवाई में कोई भी प्रतिवादी 'जस टर्टी' का तर्क नहीं दे सकता है कि कब्जे का अधिकार किसी तीसरे व्यक्ति पर अदत है। जाहिर है, उनके इस तर्क को पुष्ट करने के लिए कि वाद चलने योग्य है, प्रतिवादियों के इस तर्क पर आधारित है कि कब्जे का अधिकार किसी तीसरे व्यक्ति में अदत है जो 'जस टर्टी' के सिद्धांत को आकर्षित करता है और इसलिए, उन्हें चुनौती देना उचित नहीं है। मुकदमे की स्थिरता के लिए प्रतिवादी ने कृष्णा राम

महाले (मृत), एलआरएस बनाम श्रीमती शोभा वेंकट राव⁶ में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया। विवादित निर्णय से पता चलता है कि उपरोक्त निर्णय में कानून की व्याख्या के आधार पर और तथ्यात्मक स्थिति पर ध्यान देते हुए, उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि वाद की स्थिरता के संबंध में प्रतिवादियों द्वारा दी गई चुनौती असमर्थनीय है। इस संदर्भ में, उच्च न्यायालय ने भी **नायर सर्विस सोसाइटी लिमिटेड बनाम रेव. फादर के.सी. अलेक्जेंडर और अन्य**⁷ में इस न्यायालय के निर्णय विचार किया है। उक्त निर्णय में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह नहीं कहा जा सकता है कि छह महीने की अवधि समाप्त होने के बाद अन्य केवल पूर्व कब्जे के आधार पर वाद संभव नहीं है और यह जहां तक प्रासंगिक है इस प्रकार है:-

“15. हम तर्क के एक हिस्से से सहमत हैं लेकिन सम्मान के साथ हम इस विचार को स्वीकार नहीं कर सकते हैं कि 6 महीने की अवधि के बाद केवल पूर्व कब्जे के आधार पर वाद समाप्त हो जाता है, संभव नहीं है। विशिष्ट राहत अधिनियम, 1963 की धारा 8 मुकदमे के प्रकार को सीमित नहीं करती है, बल्कि केवल यह निर्धारित करती है कि सिविल प्रक्रिया संहिता द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिए। यह कहने से बहुत अलग है कि केवल कब्जे पर आधारित वाद छह महीने की समाप्ति के बाद अक्षम है।

सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 9 के तहत, यह है कि सिविल प्रकृति के सभीवादों पर विचार किया जा सकता है, सिवाय उन मुकदमों के जिनका संज्ञान या तो स्पष्ट रूप से या निहित रूप से वर्जित होगा।”

28. नायर सर्विस सोसाइटी लिमिटेड मामले (पूर्वोक्त) में इस न्यायालय ने उद्धृत किया **मुस्तफा साहेब बनाम सांता पिल्लई**⁸ में सहमति के साथ निम्नलिखित टिप्पणियां की गई हैं:-

“.....कि किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा अपदस्थ किया गया पक्ष जिसके पास कोई बेहतर अधिकार नहीं है, इस तरह से अपदस्थ किए गए व्यक्ति के संदर्भ में, उस अधिकार के आधार पर वसूली का हकदार है जो उसने अपदस्थ होने से पहले रखा था, भले ही वह अधिकार बिना किसी अधिकार के था।”

29. उपरोक्त निर्णयों और इस मामले में प्राप्त तथ्यात्मक स्थिति को देखते हुए, हमारी राय में, अपीलकर्ताओं द्वारा जिन निर्णयों पर भरोसा करने की मांग की गई है, वे वास्तव में कोई सहायता नहीं हैं।

30. यह स्पष्ट है कि प्रतिवादियों के उपलब्ध अभिवचनों पर सावधानीपूर्वक विचार करने पर, उच्च न्यायालय ने कहा कि उन्होंने अपने लिखित बयान में अपने बचाव का खुलासा नहीं किया और साथ ही इसमें यह भी तर्क नहीं दिया कि वाद संपत्ति उनके कब्जे में हैं।

हमारे अनुसार, ऐसी परिस्थितियों में, जब तथ्य किसी भी पक्षकार के किसी भी अधिकार का खुलासा नहीं करते हैं, तो प्रासंगिक समय पर, केवल पूर्व कब्जा के सही मालिक को छोड़कर सारी दुनिया के खिलाफ मालिक के कल्पित चरित्र में भूमि के कब्जे के अधिकार का फैसला करता है। उस संदर्भ में, यह योग्य है इस उक्ति को संदर्भित करने के लिए कि 'स्वामित्व का अधिकार सर्वोपरि है। जिस के पास अधिकार है, वह सभी के खिलाफ अधिकार रखता है, सिवाय उसके जिसके पास अधिकार है।

31. इस मामले में प्राप्त तथ्यात्मक स्थिति और उपरोक्त निर्दिष्ट निर्णयों में तय की गई कानूनी स्थिति के आलोक में हमारा दृढ़ विचार है कि उच्च न्यायालय मुकदमा की स्थिरता के प्रश्न को सकारात्मक और प्रत्यर्थी के पक्ष में रखने में सही है।

32. अब, हम इस प्रश्न पर विचार करेंगे कि क्या अपीलकर्ताओं द्वारा गैर-प्रतिस्थापन के लिए और मूल तीसरे प्रतिवादी-हनुमैया की मृत्यु पर सभी कानूनी प्रतिनिधियों को शामिल करने में विफलता के कारण सभी प्रतिवादियों के खिलाफ वाद समाप्त कर देना चाहिए था। यह तर्क कि

आवश्यक पक्षकारों के शामिल न होने के कारण वाद खराब है, भी इसी कारण से उठाया गया है। अतः इन प्रश्नों पर संयुक्त रूप से विचार किया जाना चाहिए। जाहिर है, निचली अदालतों ने प्रतिवादियों की उक्त दलीलों को बरकरार रखने से इनकार कर दिया। यह ध्यान देने योग्य है कि अपीलकर्ताओं ने यह भी तर्क दिया है कि श्रीमान माधव संघ जो एक संगठन है और श्री विठ्ठल राव को मुकदमे में पक्षकार के मुकदमा में शामिल किया जाना चाहिए था और उनके गैर-पक्षकार को देखते हुए, मुकदमा आवश्यक पक्षों के गैर-पक्षकार के लिए बुरा है। उसी पर विचार करते हुए, यह तथ्य कि उपरोक्त श्रीमान माधव संघ और श्री विठ्ठल राव ने प्रत्यर्थी के खिलाफ एचआरसी सं. 10020/1991 के रूप में बेदखली के लिए एक याचिका दायर की, जिसमें यह कहा गया था कि उसमें पहला प्रत्यर्थी (इसमें प्रत्यर्थी) अनुसूची संपत्ति के एक हिस्से पर कब्जा कर रहा है और उसने अवैध रूप से और अनधिकृत रूप से संपत्ति के अन्य दो हिस्सों को दूसरे और तीसरे प्रत्यर्थी, श्री बी. रामचंद्र राव और श्री बी. रामचंद्र राव को उप-पट्टा पर दिया है। एन. मुरलीधर राव क्रमशः रु.400/- और रु.300/- के मासिक किराये पर और उनसे किराया वसूल कर रहे हैं, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा उचित रूप से ध्यान में रखा गया है, इसे ध्यान में रखने की आवश्यकता है। इसके अलावा, यह तथ्य कि डी.डब्ल्यू.-1 के रूप में जाँच किए जाने के दौरान मृतक दूसरे अपीलकर्ता ने बयान दिया था कि दिनांक 01.03.1993 के बिक्री के लिए प्रदर्शनी डी.-1 समझौते के निष्पादन के बाद कोई कब्जा नहीं लिया गया था क्योंकि श्रीमान माधव संघ ने कब्जा सुरक्षित करने और कब्जे को पहले अपीलकर्ता/पहले प्रत्यर्थी को सौंपने का आश्वासन दिया था। जब वह स्थिति हो और जब वाद विषय पूर्व अधिकार पर आधारित हो, तो यहां अपीलकर्ताओं का यह तर्क देना उचित नहीं है कि वाद श्रीमान माधव संघ और श्री विठ्ठल राव के असंयोजन लिए बुरा है।

33. जैसा कि पहले देखा गया, अपीलकर्ताओं ने यह भी तर्क दिया है कि मृतक प्रतिवादी संख्या 3 की मृत्यु के बाद उसके सभी कानूनी प्रतिनिधियों का प्रतिस्थापन न किए जाने के कारण सभी प्रतिवादियों के

विरुद्ध मुकदमा समाप्त कर दिया जाना चाहिए था। यह तर्क किसी भी आधार और गुणों से रहित है और इसे नीचे की अदालतों द्वारा सही ढंग से खारिज कर दिया गया था। इस संबंध में यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि पहले अपीलकर्ता और मृतक दूसरे अपीलकर्ता और उनके पिता हनुमैया सभी प्रतिवादी के रूप में वाद में शामिल थे और वे संयुक्त रूप से वाद का बचाव कर रहे थे। मूल तीसरे प्रतिवादी अर्थात् हनुमैया की मृत्यु पर, मूल प्रतिवादी संख्या 1 और 2, जो मूल प्रतिवादी संख्या 3 के पुत्र हैं, पूरी तरह से और पर्याप्त रूप से संयुक्त हित का प्रतिनिधित्व करते हुए वाद लड़ा और उसके बाद, एक प्रतिकूल निर्णय और डिक्री का सामना करने के बाद वाद में उच्च न्यायालय के समक्ष अपील को तत्परता से प्रस्तुत किया गया, जिसकी परिणति अंततः विवादित निर्णय और डिक्री में हुई। इसके बाद भी, जाहिर तौर पर वे उपरोक्त अपील दायर करके, संयुक्त हित के तर्क को सही मानने के बावजूद, संयुक्त हित पर पूरी लगन से वाद चला रहे हैं।

34. प्रासंगिक स्थिति में निम्नलिखित निर्णय लिए जाते हैं प्रासंगिकता **भुरे खान बनाम यासीन खान (मृत) एलआर और अन्य** में निर्णय को उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय में अपीलार्थियों के उपरोक्त तर्क को अस्वीकार करने के लिए संदर्भित किया गया था अन्य अर्थात् मूल प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2 **भुरेय खान** के मामले में निर्णय के पैराग्राफ 4 में, इस अदालत ने इस प्रकार निर्णय दिया:-

“..... इस प्रकार मृतक की संपत्ति का पर्याप्त प्रतिनिधित्व किया गया था। यदि अपीलकर्ता ने मृतक की बेटियों और विधवा को अभिलेख पर लाने के लिए कोई आवेदन दायर नहीं किया होता, तो अपील सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22 नियम 4 के तहत समाप्त नहीं होती, जैसा कि इस न्यायालय ने महाबीर प्रसाद बनाम जाग राम [(1971) 1 एससीसी 265: एआईआर 1971 एससी 742] हमारी राय में, स्थिति और खराब नहीं होगी जहां अन्य कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड पर लाने के लिए आवेदन किया गया था,

लेकिन उसे किसी न किसी कारण से खारिज कर दिया गया था।
चूंकि मृतक की संपत्ति का प्रतिनिधित्व किया गया था, इसलिए
अपील को कम नहीं किया जा सकता था।

35. प्रधान सचिव अन्य अन्य द्वारा से **आंध्र प्रदेश राज्य में निर्णय
में प्रताप करण और अन्य¹⁰** अन्य इस न्यायालय ने निर्णय दिया:-

“40. तत्काल मामले अन्य बातों के साथ साथ, वादी एक साथ
शामिल हो गए और मुकदमे की भूमि के संबंध अन्य बातों के साथ
साथ मालिकों और मालिकों के मुकदमा अन्य बातों के साथ साथ
अपने नामों को इस आधार पर शामिल करके राजस्व रिकॉर्ड अन्य
बातों के साथ साथ सुधार के लिए मुकदमा दायर किया कि उनके
पूर्ववर्ती की मृत्यु के बाद, जो निश्चित मुकदमा से पट्टादार और
खतादार थे, वादी संपत्ति के हिस्सेदार के मुकदमा अन्य बातों के
साथ साथ उत्तराधिकारी बने क्योंकि खतादार के बेटे थे। निर्विवाद
मुकदमा से, इसलिए, सभी वादियों के पास अपने पूर्ववर्तियों द्वारा
छोड़ी गई वाद संपत्ति में समान हिस्सेदारी थी। इसलिए, किसी भी
वादी की मृत्यु की स्थिति में, संपत्ति को मुकदमे की संपत्ति के
मालिकों के मुकदमा में अन्य भागीदारों द्वारा पूरी तरह से और
पर्याप्त मुकदमा से प्रतिनिधित्व किया जाता है। इसलिए, उच्च
न्यायालय में अपील विचाराधीनता रहने के दौरान मरने वाले मृतक
वादी के कानूनी प्रतिनिधि (ओं) के प्रतिस्थापन न होने के कारण,
पूरी अपील समाप्त नहीं होगी। मृतक की संपत्ति में निश्चित
हिस्सेदारी रखने वाले शेष हिस्सेदार, अपील को समाप्त किए बिना
अपील के साथ आगे बढ़ने के हकदार होंगे। इसलिए, हम
अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा की गई
प्रस्तुति से सहमत होने का कोई कारण नहीं पाते हैं।”

36. हमारा विचरित दृष्टिकोण यह है कि यही सादृश्य उस मामले में भी लागू होता है, जहां प्रतिवादियों में से एक की मृत्यु की स्थिति में भी, जब संपत्ति/हित पूरी तरह से और पर्याप्त रूप से दिया जा रहा था, मुकदमे में मृतक प्रत्यर्थी के साथ अन्य प्रत्यर्थियों द्वारा संयुक्त रूप से प्रतिनिधित्व किया गया है और जब वे उसके कानूनी प्रतिनिधि भी हैं। ऐसे मामलों में, उक्त प्रत्यर्थी की मृत्यु के परिणामस्वरूप मुकदमा अन्य सभी कानूनी उत्तराधिकारियों को लागू न करने के कारण, प्रतिवादियों को यह तर्क देते हुए नहीं सुना जा सका कि मृतक प्रत्यर्थी के अन्य सभी कानूनी प्रतिनिधियों के प्रतिस्थापन के कारण मुकदमे को समाप्त कर दिया जाना चाहिए। इस मामले में, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि तीसरे मृतक प्रत्यर्थी के साथ मूल प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2 संयुक्त रूप से अपने संयुक्त हित का बचाव कर रहे थे। अतः, उपरोक्त निर्णय के अनुपात को लागू करते हुए और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलार्थी/मूल प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2 ने मूल प्रत्यर्थी संख्या 3 की मृत्यु के बावजूद मुकदमे का बचाव किया और पहली अपील को प्राथमिकता दी और मुकदमा चलाया। दूसरे अपीलकर्ता की मृत्यु के बाद इस कार्यवाही में पहले अपीलकर्ता द्वारा दूसरे मृतक अपीलकर्ता के प्रतिस्थापित कानूनी प्रतिनिधियों के साथ संयुक्त हित को पूरी तरह से और पर्याप्त रूप में मुकदमा को आगे बढ़ाया जा रहा है, हम इस तर्क को अस्वीकार करने के लिए नीचे की अदालतों के निष्कर्षों और प्राप्तियों से असहमत होने का कोई कारण नहीं पाते हैं कि सभी प्रत्यर्थियों के खिलाफ तीसरे मृतक प्रत्यर्थी के सभी कानूनी उत्तराधिकारियों के प्रतिस्थापन के कारण मुकदमे को समाप्त कर दिया जाना चाहिए था। इसी कारण से, इस तर्क भी विफल होना पड़ा कि मुकदमा उसके सभी कानूनी उत्तराधिकारियों/प्रतिनिधियों के पक्षकारों का असंयोजन द्वारा किया गया मुकदमा खराब था।

37. एक और कारण है कि पक्षकारों के असंयोजन के लिए मुकदमा खराब था इसका कारण था कानूनी प्रतिनिधियों द्वारा तीसरे मृतक प्रत्यर्थी श्री हनुमैया के रिकॉर्ड को लाने में विफलता। हम पहले ही उस मामले को नोट कर चुके हैं जिसे प्रत्यर्थियों ने मुकदमे में दायर लिखित बयान में

आवश्यक अभिवचनों को मुकदमा बिना लाने की मांग की थी। प्रदर्शनी डी-1 पर भरोसा करते हुए यह तर्क दिया जाता है कि श्रीमान माधव संघ और श्री विठ्ठल राव द्वारा संयुक्त मुकदमा से पहले अपीलकर्ता/पहले प्रत्यर्थी के पक्ष में निष्पादित वाद अनुसूची संपत्ति की बिक्री के लिए समझौते के अनुसार इसका कब्जा पहले अपीलकर्ता को सौंप दिया गया था। हम पहले ही उच्च न्यायालय द्वारा इसकी अस्वीकृति को बरकरार रख चुके हैं। हालाँकि, हम उक्त तर्क से जो निकाल रहे हैं वह यह है कि उसी के आधार पर अपीलार्थी पक्षकारों/पक्षकार का असंयोजन आधार नहीं उठा सकते हैं, जैसा कि उपरोक्त कहा गया है, क्योंकि पहले अपीलार्थी को मुकदमे में ही एक पक्षकार के मुकदमा में प्रस्तुत किया गया था और वह वह व्यक्ति था जिसके पक्ष में उसे कथित मुकदमा से निष्पादित किया गया था। प्रदर्शनी डी-2 के आधार पर विवाद उठाया गया बिक्री विलेख को भी उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था और हमने भी इसे बरकरार रखा है। हमने केवल इस स्थिति पर जोर देने के लिए उसी पर फिर से ध्यान दें कि उसी पर बनाया गया मामला किसी भी तरह से पक्षकारों/पक्षकार का असंयोजन के विवाद को उठाने का आधार नहीं हो सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि मृतक दूसरा अपीलकर्ता जिसे उसके तहत विक्रेता के मुकदमा में दिखाया गया था, मुकदमे में मूल दूसरा प्रत्यर्थी था। उपरोक्त कारणों से भी पक्षकारों के असंयोजन का तर्क विफल होना चाहिए।

38. हमने पहले ही पाया है कि नीचे दी गई अदालतें यह अभिनिर्धारित मुकदमे में सही हैं कि प्रतिवादियों के पास वाद अनुसूची संपत्ति पर स्वामित्व का कोई मामला नहीं था और प्रदर्शनी डी-2 के आधार पर सामने लाने की मांग मुकदमे वाले इस तरह के मामले को उच्च न्यायालय द्वारा खारिज मुकदमा दिया गया था और हमने इसे कायम रखा है। वे कब्जे के लिए कोई बेहतर दावा स्थापित करने में भी विफल रहे हैं। उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष कि उचित अभिवचनों के बिना किसी भी मात्रा में साक्ष्य का कोई लाभ नहीं होगा, कानून की सही व्याख्या है। फैसले में **दुग्गी वीरा वेंकट गोपाल सत्यनारायण बनाम सकल वीरा**

राघवैया और अन्य¹ में, यह न्यायालय द्वारा पहले के निर्णय **हसमत राय और अन्य बनाम रघुनाथ प्रसाद**¹² में की गई टिप्पणी से सहमत था कि अभिवचन के बिना प्रस्तुत किए गए सबूत की कोई भी प्रासंगिकता आम तौर पर नहीं होती है। **दुग्गी में वीरा वेंकट गोपाल सत्यनारायण** (उपरोक्त) **हसमत राय और अन्य** (उपरोक्त) में उपरोक्त टिप्पणियों के संबंध में इस न्यायालय ने कहा, 'हम कानून के उपरोक्त कथन से सम्मानपूर्वक सहमत हैं और उसी को दोहराते हैं।' इसके अलावा, पैराग्राफ का उल्लेख करना भी प्रासंगिक है। **85.6 भारत संघ बनाम इब्राहिम उद्दीन और अन्य**¹³ के निर्णय में, जो इस प्रकार है:-

“85.6. अदालत अभिवचनों से आगे नहीं बढ़ सकती क्योंकि कोई भी पक्ष उस मुद्दे/बिंदु पर साक्ष्य का नेतृत्व नहीं कर सकता है जो अभिवचनों में नहीं उठाया गया है और यदि ऐसा साक्ष्य प्रस्तुत किया गया है या अदालत द्वारा तथ्य का निष्कर्ष दर्ज किया गया है, तो इसे केवल नजरअंदाज किया जाना चाहिए। हालाँकि यह एक अलग मामला हो सकता है जहाँ विशिष्ट अभिवचनों के बावजूद, एक विशेष मुद्दा तैयार नहीं किया जाता है और विवाद में मुद्दे की पूरी जानकारी रखने वाले पक्ष साक्ष्य का नेतृत्व करते हैं और अदालत उस पर एक निष्कर्ष दर्ज करती है।”

39. ऐसी पस्थितियों में, हमें यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि मूल प्रत्यर्थी लिखित लिखित पर्याप्त और उपयुक्त अभिवचन इस बात को उठाने में असफल रहे कि उनके पास बेहतर अधिकार है। वाद संपत्तियों पर कब्ज़ा। उचित दलीलों के बिना पेश किए गए किसी भी सबूत की कोई प्रासंगिकता नहीं होगी। नीचे की अदालतों ने 'बी' अनुसूचीत संपत्ति से प्रतिवादियों को बलपूर्वक बेदखल करने के लिए अ.सा. -5 के साक्ष्य पर सही ढंग से भरोसा किया है। उक्त निष्कर्ष को कायम रखने के लिए कुछ भी रिकॉर्ड पर नहीं है।

40. प्रश्नों पर विचार करने और उत्तर देने के बाद इस प्रकार उल्लेख किया गया है ऊपर, हमने यह जानने के लिए उत्सुकतापूर्वक विचार किया

कि क्या आक्षेपित निर्णय विकृति या किसी पेटेंट अवैधता से प्रेरित है अनुच्छेद 136 के तहत शक्ति के आह्वान में हस्तक्षेप की गारंटी भारत का संविधान. नीचे दिए गए न्यायालयों द्वारा दिए गए ठोस कारण हमें इसका उत्तर नकारात्मक में देने के लिए प्रेरित करें। ध्यानपूर्वक विचार करने के बाद रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य से विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि यहां प्रतिवादी/वादी मुकदमा अनुसूची संपत्ति का कब्जा वापस पाने का हकदार है, जिससे उसे बेदखल कर दिया गया था और यहां तक कि विचारण न्यायालय द्वारा रिकॉर्ड किए गए और उच्च न्यायालय को प्रेषित अतिरिक्त सबूतों पर सावधानीपूर्वक विचार करने और संदर्भ में सभी तर्कों और पहलुओं पर विचार करने के बाद भी उच्च न्यायालय के अनेक निर्णयों ने केवल विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री की पुष्टि की। जैसा कि पहले देखा गया है, जब नीचे दी गई अदालतों के समवर्ती निष्कर्ष रिकॉर्ड पर सामग्री के उचित विचार और सराहना का परिणाम होते हैं तो उन्हें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं होती है।

41. इस प्रकार, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि मुकदमा निर्विवाद रूप से पूर्व अनुमति और अवैध बेदखली के आधार पर दायर किया गया था, हमें मृत दूसरे अपीलकर्ता के पक्ष में निष्पादित प्रदर्शनी डी-2 बिक्री विलेख (भले ही मालिकों द्वारा) रखने का कोई कारण नहीं मिलता है। विचारण न्यायालय कोर्ट द्वारा दी गई और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई डिक्री के लिए प्रतिवादी/वादी के अधिकार पर नीचे की अदालतों के समवर्ती निष्कर्षों को विस्थापित करना। उक्त स्थिति में, यह अपील विफल हो जाएगी। परिणामस्वरूप, इसे खारिज किया जाता है। इन परिस्थितियों में, लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

निधि जैन

अपील खारिज

सहायता राखी (पु.प्र.भू.)द्वारा

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।